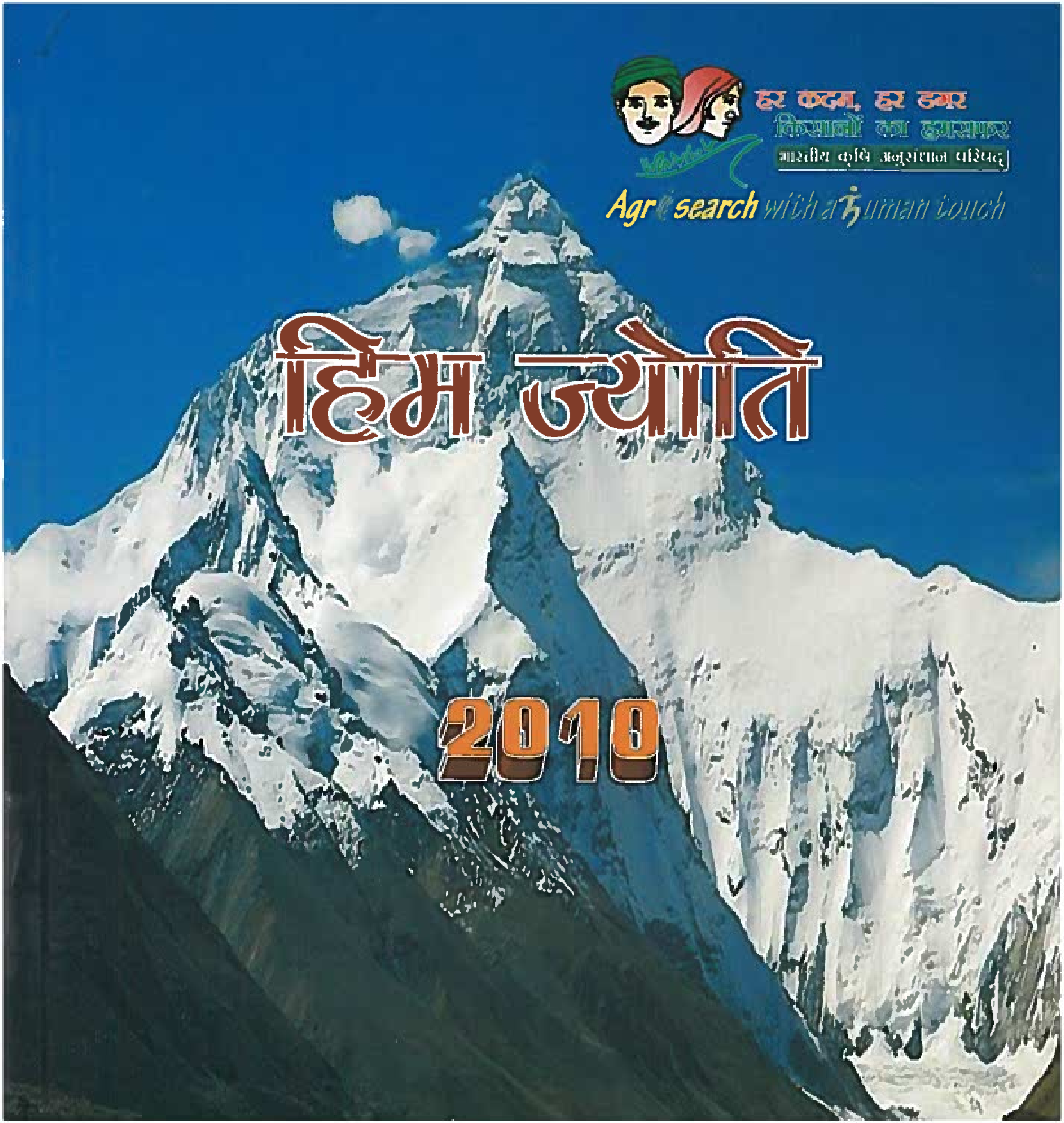
हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch
हिम ज्योति
2010

हिम ज्योति

2010

सम्पादन

डा. प्रेम कुमार,

ड़ा. आर. एस. पतियाल

श्री अमित कुमार जोशी

डा. ए.बराट

अनुवाद

श्री अमित कुमार जोशी

कम्प्यूटर टंकण एवं सहयोग

अमित कुमार सक्सेना

श्रीमती मुन्नी भक्त

प्रकाशक

डा. पी.सी. महंता

निदेशक

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

भीमताल, (नैनीताल) उत्तराखण्ड

बी. मीनाकुमारी
उप महानिदेशक (मत्स्य)
B. Meenakumari
Deputy Director General (Fisheries)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि अनुसंधान भवन –II
पूसा, नई दिल्ली 110 012
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI ANUSANDHAN BHAVAN-II
PUSA, NEW DELHI- 110 012.

संदेश

समाजोन्मुखी साहित्य हमेशा जीवन का पक्ष लेता है, इसलिए उसमें विविधता होती है। यह विविधता उसे जीवंत बनाती है। जीवन के सभी पक्षों का समावेश करते हुए सहज, लोक सरोकारों से युक्त और लोकरंजक साहित्य ही लोकप्रिय होता है। ऐसा साहित्य लिख पाने के लिए जरूरी है कि साहित्यकार परिवेश गत रचनात्मकता में गहरी पैठ रखता हो। वैश्वीकरण और सूचना प्रौद्योगिकी क्रान्ति के इस दौर में जबकी अंग्रेजी हमारे परिवेश पर पूरी तरह से छायी हुयी प्रतीत होती है, हिन्दी में किसी नियमित प्रकाशन का विचार मात्र ही और वह भी एक ऐसे राष्ट्रीय शोध में जहां कि उच्च स्तरीय जटिल अनुसंधान कार्य होता है सतही स्तर पर एक दुर्गम कल्पना प्रतीत होती है।

किन्तु यदि हमें अपनी अनुसंधान उपलब्धियों को जन साधारण तक पहुंचाना है तो हमें इस अव्यवहारिक दिखने वाले कार्य को व्यवहारिक बनाना ही होगा। विभिन्न वैज्ञानिक संस्थानों द्वारा हिन्दी में गृह पत्रिकाओं का प्रकाशन इसी उददेश्य से किया जाता है। इसी श्रृंखला में निदेशालय द्वारा **हिम ज्योति वार्षिक पत्रिका** का प्रकाशन एक सराहनीय कदम है। आशा है कि यह पत्रिका अपने उद्देश्यों की पूर्ति करेगी। इस अवसर में निदेशालय को हार्दिक शुभ कामना देती हूँ।

निदेशक की कलम से !

विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान करने का सबसे सशक्त माध्यम भाषा है। भाषा जितनी सरल, सरस और रूचिकर होती है उसके द्वारा अभिव्यक्त विचार भी उतने ही प्रभावशाली होते हैं। भाषा की शक्ति का सबसे सुंदर निखार उसकी संक्षिप्तता और सरलता में ही मिलता है और सरलता बोलचाल की सामान्य भाषा में ही निहित होती है। किसी भाषा का विकास तब होता है जब वह जन साधारण के हृदय में स्थान पाती है। हिन्दी को भारतीय गणतंत्र की राजभाषा के रूप में भी स्वीकार किया गया है। हिन्दी हमारे देश की सम्पर्क भाषा के साथ साथ राजभाषा भी है। मत्स्य पालन के क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि देश के अधिकांश कृषकों की भाषा हिन्दी है। हमारा संस्थान भी हिन्दी के प्रयोग की प्रगति की ओर अग्रसर है। संस्थान के क्रिया–कलापों एवं शोध उपलब्धियों को आम कृषकों तक पहुंचाने एवं उन्हें लाभान्वित करने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा विकसित मत्स्य पालन की तकनीकियों से सम्बन्धित प्रसार पुस्तिकाओं को हिन्दी में प्रकाशित किया गया है तथा संस्थान की समाचार पत्रिका में शोध उपलब्धियों का सारांश दिया जाता रहा है। इनके अतिरिक्त मत्स्य पालन से सम्बन्धित सभी प्रकार के प्रशिक्षण मत्स्य पालकों को हिन्दी में ही दिऐ जाते हैं। राजभाषा संकल्प 1968 के अनुपालन के क्रम में राजभाषा विभाग, भारत सरकार द्वारा सभी सरकारी विभागों को कुछ लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं। इन्ही लक्ष्यों की प्राप्ति के अभियान में अपना योगदान सुनिश्चित करने के लिए शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय ने विगत वर्ष से राजभाषा पत्रिका–'हिम ज्योति' का प्रकाशन आरम्भ किया है। पत्रिका का द्वितीय अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। इसके लिए मैं संस्थान के हिन्दी अनुभाग व प्रकाशन से जुड़े कार्यकर्ताओं को बधाई देता हूं और आशा करता हूं कि यह संस्थान भविष्य में भी राजभाषा की प्रगति की दिशा में अग्रसर रहेगा।

शुभकामनाओं सहित।

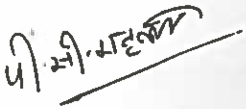

प्राक्कथन

हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता प्रदान करते समय हमारे संविधान निर्माताओं को यह पूर्ण विश्वास था कि हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में द्रुतगति से स्थापित होगी और कुछ ही समय में सम्पूर्ण राष्ट्र की सर्म्पक भाषा के पद पर आसीन हो जाएगी। इसलिए हमारे संविधान के अनुच्छेद 351 में यह विशेष निर्देश दिया गया है कि 'संघ का यह कर्तव्य होगा कि यह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके....'' ।

आज हिन्दी सम्पर्क के साथ–साथ व्यावसायिक भाषा का स्थान ले रही है। परन्तु हमारा कर्तव्य यहीं समाप्त नहीं हो जाता। आज एक नए संकल्प की आवश्यकता है। यह संकल्प हिन्दी में रचनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से ही पूरा किया जा सकता है।

इस अवसर पर मैं हमारे सहृदय निदेशक महोदय डा. पी.सी. महंता के प्रति हार्दिक अभिवादन एवं आभार व्यक्त करता हूं जिनके स्नेहपूर्ण मार्गदर्शन से 'हिम–ज्योति' पत्रिका का प्रकाशन सम्भव हो सका। मैं निदेशालय सहित दूसरे कार्यालयों के उन सभी रचनाकारों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूं जिन्होंने पत्रिका के लिए अपनी रचनाऐं भेजी हैं। राजभाषा नीति के कार्यान्वयन एवं प्रोत्साहन के लिए राजभाषा समिति के सदस्यों एवं डा. हरीश चन्द्र जोशी, निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली से हमें आवश्यक मार्गदर्शन प्राप्त होता रहता है जिसके लिए मैं उनका आभार व्यक्त करता हूं। अन्त में मैं पत्रिका प्रकाशन में सहयोग हेतु संस्थान के सभी सदस्यों का आभारी हूं और विशेष रूप से डा. प्रेम कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रभारी हिन्दी का तथा डा. ए. बराट प्रधान वैज्ञानिक, डा. आर. एस. पतियाल वरिष्ठ वैज्ञानिक का विशेष रूप से धन्यवाद करता हूं जिन्होंने इस कार्य में अपना अमूल्य योगदान दिया।

इन्ही शब्दों के साथ 'हिम–ज्योति' का यह द्वितीय संस्करण आपके समक्ष प्रस्तुत है। हमें आपके बहुमूल्य सुझावों और रचनाओं की प्रतीक्ष रहेगी। इस पत्रिका को भविष्य में और अधिक रूचिकर एवं उपयोगी बनाने में हमें आप सभी का सहयोग यथावत मिलता रहेगा, इसी आशा और विश्वास के साथ ।

अमित कुमार जोशी

विषय सूची

1 उच्च हिमालयी क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा हेतु मात्स्यिकी अनुसंधान की भावी दिशाऐं 1
पी. सी. महंता

2 हिन्दी का राष्ट्रीय स्वरूप 2
बी. एल. शर्मा

3 संस्थान में दिन–प्रतिदिन के सरकारी कार्य में राजभाषा हिन्दी के बढ़ते चरण 5
तेज बहादुर पाल

4 अगले जनम मुझे मछली ही कीजो 8
एन. एन. पाण्डेय

5 जनपद चम्पावत की नदियों में महाशीर संरक्षण से ईकोटूरिज्म की अपार सम्भावनायें 13
आर. एस. पतियाल, ए. बराट, प्रेम कुमार एवं पी.सी.महन्ता

6 पर्वतीय क्षेत्रों में नील क्रांति द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक विकास की अपार संभावनाऐं 16
एस कुमार, एच.सी. बिष्ट एवं ममता जोशी

7 उत्तराखण्ड में ओक तसर सम्वर्द्धन, कीट पालकों की समस्याऐं एवं समाधान 21
एम. सी.जोशी

8 उत्तराखण्ड का लोकगीत 24
देव सिंह पोखरिया एवं रंजना शाही

9 थार मरूस्थल की विलक्षण जैव विविधता संरक्षण 33
डी. डी. ओझा

10 भारतीय स्नोट्राउट में शीतजल अनुकूलनता हेतु कम तापमान में ग्लिसरोल उत्पादन की प्रक्रिया : एक अध्ययन 37
अशोकतरू बराट, अंकिता त्यागी, चिराग गोयल एवं आर. एस.पतियाल

11 पर्वतीय क्षेत्रों में मछली पालन एक लाभकारी व्यवसाय 39
प्रेम कुमार, एस. अली एवं आर. एस. पतियाल

12 मध्य हिमालय में पादप जननद्रव्य गतिविधियों से आशाऐं, अपेक्षाऐं एवं क्षरण रोकने के उपाय 42
कुलदीप सिंह नेगी, कमलेश चंद्र मुनीम, ए.के.त्रिवेदी एवं पी.एस.मेहता

13 मत्स्य सम्वर्द्धन द्वारा जीविकोपार्जन 45

15	देवभूमि उत्तराखण्ड : एक सामान्य जानकारी अमित कुमार जोशी	49
16	झींगा पालन : एक सामान्य जानकारी ममता जोशी	54
17	गुणों की खान है – नमक डी. डी. ओझा	57
18	उत्तरांचल की लोकसंस्कृति, कला एवं साहित्य अमित कुमार जोशी, आर.एस.पतियाल एवं टी.एम.शर्मा	59
19	जलवायु परिवर्तन स्मिता नरियाल	62
20	शीतजल मत्स्य अनुसंधान निदेशालय त्रिवेणी माधव शर्मा	64
21	कुछ पल तो जी लूं किरन बेलवाल	65
22	भगवान का परिचय हयात सिंह चौहान	66
23	बौद्धिक सम्पदा अधिकार घनश्याम नाथ झा, प्रेम कुमार एवं एस. अली	67

उच्च हिमालयी क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा हेतु मात्स्यिकी अनुसंधान की भावी दिशाऐं

पी. सी. महंता

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

हमारे देश के उत्तर एवं दक्षिण पर्वतीय क्षेत्र विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक एवं मानव निर्मित जल संसाधनों से परिपूर्ण हें। जम्मू कश्मीर, हिमांचल प्रदेश , उत्तर प्रदेश, उत्तर पूर्वी प्रान्त, पश्चिमी बंगाल, तमिलनाडु एवं केरल में बहने वाली नदियां, इन नदियों पर बनाए गए विशाल एवं मध्यम श्रेणी के जलाशय, पग–पग पर बिखरी प्राकृतिक झीलें, नहरें एवं ताल–तलैया पर्वतीय क्षेत्रों के प्रमुख मात्स्यिकी जल संसाधन हैं। यद्यपि इन मात्स्यिकी संसाधनों की प्रकृति, उत्पादन एवं उत्पादकता में भौगोलिक, मृदीय, जलवायु एवं तापक्रम के कारणों से काफी विभिन्नता है फिर भी इनमें विश्व की प्रमुख आखेट एवं भोजन योग्य मत्स्य प्रजातियों का विशाल भंण्डार निहित है। अतः यदि इन संसाधनों का समुचित विकास किया जाए तो यहां के लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में गुणात्मक सुधार लाया जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात पर्वतीय मात्स्यिकी अनुसंधान संसाधन, बैरकपुर एवं शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल के प्रयासों से वैज्ञानिक आधारशिला मिली जिससे पर्वतीय मात्स्यिकी विकास कार्यक्रम में गतिशीलता आयी। इन संस्थानों में कार्यरत वैज्ञानिकों के गहन अनुसंधान एवं विकास कार्यकलापों का ही फल है कि आज पर्वतीय प्रदेशों के लोग देशी एवं विदेशी ट्राउट, कार्प तथा महाशीर जैसी महत्त्वपूर्ण मछलियों का नियन्त्रित अवस्थाओं में बीज उत्पादन एवं पालन पोषण कर रहे हैं। यह एक विडम्बना ही है कि प्राकृतिक मात्स्यिकी संसाधनों एवं मीन सम्पदा से परिपूर्ण पर्वतीय प्रदेशों में मत्स्य उत्पादन दर में तीव्रता से ह्रास हो रहा है। बढती जनसंख्या के दबाव, गरीबी, बेरोजगारी, वनों का विनाश, निर्माण गतिविधियों, औद्योगिक विकास, भू–अपरदन एवं सिंचाई परियोजनाओं के कारण मछलियों का आवास एवं प्रजनन स्थल प्रभावित हुआ है।

पर्वतीय मात्स्यिकी का विकास सही अर्थों में तभी संभव है जब दायित्वहीन एवं विनाशकारी गतिविधियों को नियन्त्रित किया जाए तथा उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ सुरक्षा प्रबन्धों पर विशेष ध्यान दिया जाए। अनुसंधान की प्रक्रिया ऐसी है जो निरन्तर चलती रहती है एवं कभी समाप्त नही होती। अनुसंधान प्रक्रिया

हिन्दी का राष्ट्रीय स्वरूप

बी.एल.शर्मा
(राजभाषा) हुडको, नई दिल्ली

भारत एक बहुभाषी राष्ट्र है। इसलिए संप्रेषण के लिये एक संपर्क भाषा अनिवार्य है। अपनी संस्कृति की महान परम्परा और अस्मिता की सुरक्षा के साथ–साथ राष्ट्रीय एवं राजनीतिक दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि देश में कोई एक संपर्क भाषा हो।

भारत में हिन्दी न केवल संघ के सरकारी कामकाज की राजभाषा है बल्कि अखिल भारतीय संपर्क भाषा भी है। राजभाषा के लिये राष्ट्रीय अस्मिता को व्यापक अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली भाषा को राजभाषा के रूप में मान्यता दी गयी है। संविधान की अष्टम सूची में शामिल हिन्दी सहित सभी 22 भाषाएं हमारी राष्ट्रीय भाषाएं हैं। भाषा संस्कृति की वाहक होती है। अतः हिन्दी न केवल हमारी संस्कृति का अविभाज्य अंग है अपितु उसकी कुंजी भी है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 में प्रावधान है कि संघ (भारत सरकार) का यह कर्तव्य है कि वह राजभाषा हिन्दी का प्रचार प्रसार बढ़ाए और उसका विकास करें ताकि वह भारत जैसे मिश्रित संस्कृति वाले विशाल देश की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। इसलिये यह आवश्यक है कि वह हिन्दुस्तानी भाषा में व्यक्त स्वरूप, शैली, अभिव्यक्ति और संस्कार में कोई व्यवधाान न हो। उपरोक्त के साथ सरकार से यह अपेक्षा की गयी है कि वह 8वीं अनुसूची की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए हिन्दी के शब्द भण्डार के लिये मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से ग्रहण करते हुए हिन्दी तथा अन्य सभी भाषाओं की समृद्धि सुनिश्चित करें।

सरकार ने इस संदर्भ में राजभाषा अधिनियम 1963, राजभाषा संकल्प 1968 और राजभाषा नियम 1976 यथासंशोधित 1987 बनाए जिनमें राजभाषा के रूप में हिन्दी के विकास कार्यों को क्रियान्वित करने का आदेश है। सरकार ने उपयुक्त सभी आदेशों के क्रियान्वयन के लिये विभिन्न संस्थाओं की स्थापना की, जैसे केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग, केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान आदि। क्रियान्वयन के स्तर पर भी कई तरह की प्रोत्साहन योजनाओं का भी विधान किया गया है।

व्याकरण सम्मत रूप दिया। खड़ी बोली हिन्दी का भी सामानांतर विकास हो रहा था। अमीर खुसरो की कविता पहेलियों से निकली, कबीर की वाणी में पत्नी बढ़ी, हिन्दुस्तान के दूर दराज स्थानों में व्यापार, बाजार, संस्कृति समाज, धर्म के अलग--अलग लचीलेपन के साथ--साथ कभी दक्खिनी, कभी हिन्दी, कभी हिन्दुस्तानी और कभी हिन्दी युग में आम बोल--चाल की भाषा के रूप में उत्तर से दक्षिण तक फैली थी। कुछ समय तक दक्खिनी के नाम से प्रसिद्व उत्तर भारत की यह भाषा दक्षिण में लम्बें समय तक शासन, साहित्य, व्यापार और जनसंपर्क भाषा बनी रही। मुगल शासन काल में यद्यपि फारसी को राजकाज की भाषा धोषित कर दिया गया परन्तु फिर भी हिन्दी अपने ढ़ग से राजभाषा के रूप में विकसित होती रही। अकबर, जहाँगीर को हिन्दी का अच्छा ज्ञान था। औरंगजेब की पुत्री जेबुन्निसा हिन्दी में कविताएं लिखती थी। शेंरशाह सूरी काल के सिक्खों पर फारसी, हिन्दी का प्रयोग मिलता है। अधिकांश मराठी राजाओं की राजभाषा हिन्दी ही थी। अंग्रेज जहाँ अंगेजी का प्रचार, प्रसार कर रहे थे वहाँ वह यह भी जानते थे कि हिन्दी भारत की प्रतिनिधि भाषा है। अत; उन्होंने इसे विकसित नहीं होने दिया और अंग्रेजी को भारतीय पर लाद दिया। जब सन् 1947 में भारत स्वतंत्र हुआ तक तब अंग्रेजी देश की शिक्षा संस्थाओं, दफ्तरों, अदालतों, विधान सभाओं में अपना प्रभुत्व जमा चुकी थी। अंग्रेजी की भाषा संबधी जो भी नीति रही हो, हिन्दी ने अपना अस्तिस्व बनाए रखा। स्वतंत्रता के लिए जूझने वाले विभिन्न प्रांतो के लोगो के द्वारा विचार विमर्श मिली जुली भाषा में होता था इससे हिन्दी को अत्याधिक बल मिला। स्वतंत्रता आन्दोलन की बागडोर गांधी जी के हाथ में थी, गांधी जी जनमानस की चेतना का पहचान कर दूरगामी दृष्टि रखते थे। इसीलिए उन्होंने हिन्दी और हिन्दुस्तानी का प्रचार किया और हिन्दी का एक राजनीतिक और सामाजिक दर्शन प्रदान किया। स्वतंत्र्ता प्राप्ति के बाद भारत के संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। धारा 343 (1) में साफ शब्दों में उल्लेख है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। यहाँ यह बात दिया जाना उचित ही होगा कि देवनागरी लिपि न केवल संसार की सरलतम लिपि है बल्कि सर्वाधिक वैज्ञानिक भी है। इसी धारा में प्रावधान है कि भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप का ही प्रयोग किया जाए । ये अंक संसार को भारत की देन है और इन्हें संसार के अधिकतर देशों ने स्वीकार किया है। संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया जाना तार्किक एवं संगत है। भारत जैसे विशाल देश में भाषा के स्वरूप में विविधता मिलना स्वाभाविक है। क्षेत्रीय अवमिश्रण से हिन्दी में सामाजिक संस्कृति और शैली के नए आयामों को विकसित होने का अवसर मिलता है। भाषा में भिन्न--भिन्न सामाजिक प्रयोजनों के लिए उसमें शैली की भिन्नता भी स्वाभाविक है। हिन्दी की देसी प्रकृति के कारण उसमें सार्वदेशिक रूप का विकास हो रहा है।

का माध्यम हिन्दी करना होगा। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी भावी पीढ़ी अर्थात् बच्चों को बुनियादी शिक्षा के स्तर पर ही राष्ट्रभाषा हिन्दी के साथ जोड़े। श्री बी जी खेर की अध्यक्षता में गठित राजभाषा आयोग (1955) की निशुल्क व अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का माध्यम राज्यों की प्रादेशिक एवं अंतः प्रातीय संबधों के लिए हिन्दी रखने की सिफारिश पर कार्रवाही न करके हमने हिन्दी का बहुत अहित कर दिया है। शिक्षा की समस्याओं पर विचार करने के लिए पीछे एक उच्चस्तरीय आयोग बना था। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ. कोठारी की इसके प्रमुख थे। इस आयोग ने अपने विस्तृत प्रतिवेदन में एक जगह यह भी लिखा है–केरल मे मलयालम से भी अधिक युवक युवतियाँ हिन्दी पढ़ रहे हैं। प्रारंभ में मुझे कुछ अजीब सी बात लगी। भला यह कैसे संभव है कि अपनी मातृभाषा से भी अधिक हिन्दी कहीं पढ़ी जाए। पर वहाँ जाकर जब पता लगाया, तो बात सही थी। राज्य के कुछ व्यक्तियों से जब उसका कारण पूछा, तो उन्होंने कहा– शिक्षा का प्रतिशत भारत में सब से अधिक हमारे यहाँ है। छोटा राज्य होने से नौकरियाँ कम हैं नौकरी के लिए अधिकांश व्यक्तियों को उत्तर भारत जाना है।

संस्थान में दिन–प्रतिदिन के सरकारी कार्य में राजभाषा हिन्दी के बढ़ते चरण

तेज बहादुर पाल
विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा

विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तर–पश्चिमी हिमालय क्षेत्र, जिसमें जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड राज्य सम्मिलित हैं, के लिए कृषि अनुसंधान में कार्यरत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का एक संस्थान है। यह एक बहुफसलीय संस्थान है जिसमें कृषि विज्ञान की विभिन्न शाखाओं पर शोध कार्य किऐ जा रहे हैं। इस संस्थान को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा वर्ष 1974 में अपने अधीन लेने के पश्चात भारत सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा इसे 'क' क्षेत्र के अर्न्तगत सम्मिलित किया गया। उसके पश्चात से इस संस्थान में राजभाषा हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया गया। यह समिति प्रत्येक तिमाही की समाप्ति के बाद संस्थान के निदेशक की अध्यक्षता में एक बैठकर हिन्दी की प्रगति के सम्बन्ध में चर्चा कर उसकी आख्या परिषद मुख्यालय को भेजती है। वर्तमान में इस संस्थान में हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार के कार्य हेतु एक तकनीकी अधिकारी (हिन्दी) है। संस्थान में कार्यरत लगभग सभी कर्मचारियों को हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है तथा वे अपने कार्य को अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी के प्रयोग को अधिक बढ़ावा देने का प्रयत्न करते हैं, साथ ही 80 प्रतिशत से अधिक कर्मचारियों को हिन्दी में काम करने की प्रवीणता होने के कारण इस संस्थान को राजभाषा नियम 1976 10 (4) के अर्न्तगत भारत सरकार के गजट के अर्न्तगत अधिसूचित भी किया गया है।

संस्थान द्वारा राजभाषा हिन्दी में किऐ जा रहे कार्यों का विवरण इस प्रकार है:

हिन्दी में टिप्पण

80 प्रतिशत से अधिक कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने की प्रवीणता प्राप्त होने के कारण कार्यालय में टिप्पण आदि के लेखन का कार्य हिन्दी में ही किया जा रहा है। अंग्रेजी में प्राप्त पत्रों के लिए की जाने वाली टिप्पण तथा नोटिंग भी हिन्दी में की जाती है।

राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3 (3) का अनुपालन

हिन्दी में पत्रचार

'क' क्षेत्र में स्थित होने के कारण यद्यपि 'क' व 'ख' क्षेत्रों को हिन्दी में भेजने जाने वाले पत्रों का लक्ष्य 100 प्रतिशत है, तथापि एक अनुसंधान संस्थान होने के कारण प्रायः अंग्रेजी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिन्दी में ही दिऐ जाते हैं।

विभागीय परीक्षाओं में हिन्दी प्रश्न–पत्र

संस्थान द्वारा संचालित विभागीय एवं प्रोन्नत परीक्षाओं में प्रश्नपत्र हिन्दी में तैयार कर उनके हल हिन्दी में ही देने का विकल्प प्रदान किया है।

साथ ही संस्थान में कर्मचारियों द्वारा अपना कार्यालय कार्य अधिक से अधिक हिन्दी में करने पर हिन्दी प्रोत्साहन योजना भी लागू कर रखी है।

यांत्रिक सुविधाऐं

इस संस्थान में कुल 15 टाइपराइटर हैं जिनमें 8 हिन्दी के हैं। राजभाषा कार्यान्वयन समिति के माध्यम से यह सुनिश्चित किया गया है कि भविष्य में जो भी टंकण मशीन क्रय की जाऐगी वह देवनागरी की खरीदी जाएगी। यद्यपि वर्तमान युग कम्प्यूटर का होने के कारण संस्थान का अधिकांश कार्य कम्प्यूटरों पर ही किया जाता है तथापि संस्थान के राजभाषा अनुभाग द्वारा सभी कम्प्यूटरों पर यूनिकोड प्रणाली उपलब्ध करायी गयी है। जिसके प्रयोग से वे सभी लोग जिन्हे अपना कार्य हिन्दी में करना नहीं आता है। वे इस प्रणाली के द्वारा अपना काम हिन्दी में सरलता से कर सकते हैं।

मानक प्रपत्र

वर्तमान में संस्थान में कार्यालय प्रयोग सम्बन्धी मानक प्रपत्र प्रयोग में लाऐ जा रहे हैं। इन सभी का हिन्दी अनुवाद कर इन्हे द्विभाषी या हिन्दी में तैयार करके प्रयोग में लाया जा रहा है तथा कार्यालय को अवगत कराया गया है कि जो भी नवीन प्रपत्र प्रयोग मे लाया जाये उसे पहले हिन्दी अथवा द्विभाषी में तैयार कर लिया जाऐ।

नामपट्ट, सूचना पट्ट तथा अन्य

का भी प्रकाशन किया जा रहा है, जिसमें प्रत्येक माह के कृषि कार्य दिऐ जाते हैं। यह कलैण्डर पर्वतीय कृषकों एवं राज्य सरकार के बीच काफी लोकप्रिय है। संस्थान निर्मित वीडियो फिल्म का हिन्दी संस्करण भी तैयार किया गया है।

संस्थान के प्रयोग में लाऐ जा रहे विभिन्न रजिस्टरों जैसे– कैश बुक, स्टाक पंजिकाऐं आदि द्विभाषिक रूप में तैयार किऐ गऐ हैं तथा इनमें प्रविष्टियां हिन्दी में की जाती हैं। इसके अतिरिक्त लेखा एवं सम्प्रेक्षण अनुभाग द्वारा सभी चैक हिन्दी जारी किऐ जाते हैं।

राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम

राजभाषा विभाग द्वारा प्रतिवर्ष जारी किऐ जाने वाले वार्षिक कार्यक्रम का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए संस्थान द्वारा जारी जिन मदों पर कार्यवाही अपेक्षित हो अथवा जिनमें लक्ष्य प्राप्त करने हेतु कार्यवाही की जानी हो, पर एक समयबद्ध कार्यक्रम बनाकर उनका अनुपालन सुनिश्चित किया जाता है। इस प्रकार संस्थान द्वारा राजभाषा हिन्दी के प्रयोग व इसकी उत्तरोत्तर प्रगति के लिए लगातार प्रयास किऐ जा रहे हैं। इसमें संस्थान के सभी अधिकारी – कर्मचारी लगातार अपना सहयोग देते हैं। संस्थान के वैज्ञानिक भी हिन्दी की प्रगति में लगातार प्रयत्नशील है।

अगले जन्म मोहे मछली ही कीजो

एन.एन. पान्डेय
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

हरिद्वार के महाकुम्भ की हलचल के बीच एक साधु बाबा ने भी हर–हर महादेव की गर्जना के साथ पवित्र गंगा जल में जोरदार डुबकी लगाई। अब साधु बाबा ने आँखे बंद किए हुए ही सूर्य देवता की अर्चना हेतु अपने हाथों की अंजली में गंगा जल भरा। अनायास उनकी अंजली में एक सुन्दर छोटी सी मछली भी आ गई। उस मछली ने अपने मधुर स्वर में कहा ऐ! साधु बाबा अपनी आँखे खोलिए। साधु बाबा ने अपनी आँखे खोली और सुन्दर मछली से कहा–ऐ सुन्दर मछली, इस शुभ घड़ी में तुम्हारा दर्शन जरूर मेरे लिए कोई शुभ संकेत है विष्णु देवता मेरे ऊपर प्रसन्न है। मछली बोली साधु बाबा मेरा जीवन तो अनर्थ है आखिर मैं आपके लिए किस प्रकार शुभ संकेत हो सकती हूँ। बाबा ने कहा –नहीं नादान मछली इस संसार में तुम्हारा महत्वपूर्ण स्थान है। ब्रहमा की इस सृष्टि में तुम्हारी प्रजाति एक नींव के पत्थर के समान है । यकीन नहीं आता, तो जाओ स्वयं दुनिया में जाकर देख लो। तुम्हे मैं अपनी योग शक्ति से मानव रूप में बदल देता हूँ तथा साथ ही दुनिया के लोगों को समझने के लिए ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान करता हूँ। मगर ध्यान रहे–अगली अमावस्या को तुम्हें अपने वास्तविक स्वरूप में मेरे पास वापस आना होगा, अन्यथा तुम्हारा अनुभव नष्ट हो जायेगा। नन्ही मछली ने सहमति में धीरे से सिर हिलाया। साधु बाबा ने उगते सूर्य की ओर मुख करके किसी मंत्र का उच्चारण किया। कुछ ही क्षणों में एक सुन्दर सी युवती गंगा तीर से निकलकर अपने भीगे केशो को झाड़ती हुई किसी संगीत की लय के समान चाल से बस्ती की ओर बढ़ने लगी। युवती का सौन्दर्य अनुपम था, बड़ी–बड़ी आँख, गोरा स्वरूप, घने काले केश और सुडौल शरीर। आखिर सामने से आ रहे कुछ लड़को ने व्यंग्य करते हुए बोल ही दिया अरे मैडम, जरा नाम तो बता दो। युवती ने कोई उत्तर नहीं दिया। एक युवक ने आगे बढ़कर बोल ही दिया चलिए मैडम यदि आप नहीं बोलती तो हम ही आपका नाम रख देते हैं। आपका सौन्दर्य तो जोर–जोर से पुकार रहा है कि आपका नाम मीनाक्षी ही होना चाहिए। युवती ने धीरे से मुस्करा दिया और देखा कि उस युवक के हाथ में एक थैला है जिस पर लिखा है–स्टार फिश शापिंग कम्पलैक्स ऋषिकेश। युवती ने बड़ी सहजता से पूछा क्या आप मुझे बता सकते हैं कि यह कौन सी बस्ती है। युवक ने कहा मैडम यह मछुआरों की बस्ती मत्स्य नगर है। युवती नें कहा –आपका क्या नाम है और आप क्या करते है। युवक ने कहा मेरा नाम टी.एन. सिंह है, प्यार से मुझे टुना कहते है। मै सी

लाया हूँ। मेरी बुआ जी कहती है कि अमावस्या को मछलियों को आटे की गोलियां खिलाने से भाग्य–वृद्धि होती है। युवती ने थोडा आगे बढकर पुनः पूछा– दोस्त इस सामने खड़े वाहन पर यह निशान किस चीज का बना है। युवक बोला– मैडम यह उत्तर प्रदेश सरकार का राज चिन्ह है इसमें दो मछलियाँ भी अंकित है। शायद आज जिलाधिकारी महोदय आदर्श मत्स्य बाजार की विल्डिंग का उद्घाटन करने आये है। अचानक युवती, युवक का साथ छोड़ आगे बढी। नजर उठाई तो सामने लिखा था डाल्फिन पब्लिक स्कूल। युवती अन्दर दाखिल हुई। एक छोटी सी बच्ची बड़ी तन्मयता से किसी आकृति में रगं–बिरंगे रंग भर रही थी। थोडी ही देर में एक छात्र ने उस आकृति के नीचे मोटे –मोटे अक्षरों में लिखा– मेरी मछली। दायीं तरफ की कक्षा में एक अध्यापिका छात्रों से प्रश्न पूछ रही थी– भोजन से हमें क्या मिलता है। तमाम जबाबों के बीच एक छात्र ने कहा –मैडम प्रोटीन और विटामिन हमें किस चीज को खाने से मिलता है ? पीछे से एक छात्र ने बोला मछली खाने से। अध्यापिका ने कहा–ठीक है, आज हम सब मिलकर मछली की कविता गायेगें।और क्षण भर में ही बच्चों के मिले जुले स्वर गूंजने लगे–मछली जल की रानी है। युवती को कुछ भूख का एहसास हुआ। वह स्कूल प्रांगण से निकलकर कुछ आगे बढ़ी ।आगे एक छोटा सा ढाबा था। उस पर लिखा था। यहाँ ताजा मुर्गा और ताजा मछली हमेशा तैयार मिलती है। युवती ने ढाबा वाले से पूछा – भैया कुछ खाने को मिलेगा। उत्तर मिला–मैडम–माछी भात मिलेगा बैठिए। युवती बोली इसके अलावा कुछ और मिलेगा । उत्तर मिला नहीं मैडम उसके लिए शहर से बाहर जाना होगा, यहाँ से आठ किमी है। युवती एक आटों रिक्शा में बैठी और शहर के एक रेस्तार में पहुँच गई। रिसेप्शन पर एक सुन्दर सा एक्वेरियम रखा था। पानी के अन्दर रगं बिंरगी मछलियां मद मस्त तैर रही थी। युवती एक टक मछलियों को निहारती रही।अचानक वेटर ने कहा–मैडम आर्डर! युवती ने बिना मीनू लिस्ट देखे पूछा सबसे अच्छी डिश कौन सी है? उत्तर मिला –मैडम आज का स्पेशल हिल्सा कढ़ी है। आर्डर देकर मैडम ने पड़ोस की टेबिल पर नजर घुमाई। एक भद्र पुरूष बैठे थे और पास में उनका बैग रखा था। बैग पर लिखा था– हिमालयन एंगलिग एसोशिएशन और एक काँटे में फसी मछली की आकृति बनी थी। नीचे एक पंक्ति और लिखी थी सेव महाशीर, प्रोमोट स्पोर्ट फिशरी। भुगतान कर युवती रेस्तरां से बाहर निकली । लोगो का झुण्ड उसी ओर आ रहा था। शायद कोई नेता जी चुनाव प्रचार कर रहे थे। पास आने पर पता लगा कि नेता जी निर्दलीय उम्मीदवार है और उनका चुनाव चिन्ह मछली है। युवती कुछ आगे बढ़ी। सामने छोटा से बोर्ड पर लिखा था हैदरावादी मछली से उपचार। पूछने पर पता लगा कि अस्थमा का उपचार हो रहा है। युवती की नजर बिजली के खम्भे पर लगे एक अन्य बोर्ड पर गई। उस पर लिखा था अखिल भारतीय किसान

थी। पास जाने पर युवती के मुँह में पानी आ गया। मत्स्य महाविद्यालय की स्टाल पर मछली के कटलेट बिक रहे थे। स्टाल के अन्दर देखा तो मछली पालन से सम्बन्धी बहुत सी प्रर्दशन सामग्री थी तथा सामने एक तस्वीर लगी थी। नीचे लिखा था–बर्ड फूड लोरियट –डा. एम.बी. गुप्ता। युवती कुछ खाने पीने के लिए महिला क्लब के पांडाल में दाखिल हुई। वहाँ उनकी भेट मधुमिता से हुई जो कि मिथिला की रहने वाली हैं और लाइब्रेरी में कार्यरत है। मधुमिता युवती को अपने घर ले गई । दोनो महिलाएं घर पहुँची ही थी कि मधुमिता की पड़ोसन प्रेमलता दास एक शुभ समाचार सुनाने आ पहुँची। मैडम दास ने बताया कि उनकी बिटिया रीना का रिश्ता पक्का हो गया। सगुन के तौर पर लड़के वाले एक बड़ी सी रोहू दे गये है। लड़का उ.प्र. के मत्स्य विभाग में निरीक्षक है। शुभ समाचार से सभी के चेहरे खिल उठे। अचानक मधुमिता को याद आया कि कल तीज का त्यौहार है और उन्हें दो किलो रोहू लानी है। पूछे जाने पर पता लगा कि मधुमिता के दो पुत्र हैं और सामाजिक रीति के अनुसार इस त्यौहार पर उन्हें प्रत्येक पुत्र के लिए एक–एक किलो रोहू माँ होने के नाते खानी है। युवती की इच्छा पहाड़ी गांव और पहाड़ के जीवन को देखने की हुई। अगले दिन प्रातः काल युवती नैनीताल की ओर रवाना हो गई। एक गांव में जाकर एक घर पर दस्तक दी। एक महिला बाहर निकली और कुछ बात–चीज के बाद घर के अन्दर ले गई। थोड़ी ही देर बाद उस घर का एक बच्चा अपनी ईजा के पास आया और शायद अपनी स्थानीय बोली कें कमर के दर्द के बारे में कुछ कहा। उसकी माँ ने बताया के आज सुबह चन्दू स्कूल से आते सड़क पर गिर गया और कमर में चोट आ गई । चन्दू की माँ ने उसकी कमर पर किसी देसी दवा का लेप किया और मछली की कशेरूका हड्डी को कमर में बाँध दिया। उसी बीच चन्दू के पिता भी घर आ पहुँचे। महिला ने पूछा कुछ लाये हैं। जबाब मिला हाँ चार छः असेला है। युवती को जोर की थकावट लगी थी कुछ ठण्डे मौसम का भी असर था और शायद बुखार भी। युवती ने दवाखाने से दवा लाने की इच्छा की मगर चन्दू की ईजा ने कहा दवाखाना बहुत दूर है असेला की करी खाओ और सो जाओ। भोर होने तक सब ठीक हो जायेगा। ऐसा ही हुआ प्रातः काल युवती स्वस्थ्य थी और ताजगी से उसकी आँखें चमक रही थी। युवती चन्दू के पिता के साथ उस छोटी सी नदी की ओर घूमने गई। उन्होने कुछ दूर नदी किनारे कुछ व्यक्तियों को कुछ करते देखा। युवती ने चन्दू के पिता से पूछा बाबा, ये लोग कौन है बाबा ने बताया ये लोग शीतजल मात्स्यिकी संस्थान से है। और माहशीर का बच्चा नदी में संचय कर रहे हैं। युवती ने उत्सुकता पूर्वक पूछा–बाबा इससे क्या होगा। बाबा ने बताया कि पहले इस नदी और गदेरों में काफी बड़ी बड़ी मछलियाँ मिलती थी लेकिन गलत ढंग से विस्फोट और जहर का प्रयोग कर लोगो ने इस खजाने को लगातार कम कर दिया। इस संस्थान ने जब से बीज संचय

मछली की जानकारी ली। एक वैज्ञानिक महोदय ने बताया कि कोलकता के मात्स्यिकी संस्थान में एक राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन हो रहा है। युवती के मन में भी कार्यशाला में भाग लेने का विचार आया।

अगले दिन युवती दिल्ली से किंग फिशर एयर लाइन की कोलकता की पहली उड़ान से बगांल के सुप्रसिद्व नगर कोलकता पहुंची। नगर के तमाम दर्शनीय स्थानों को देखते हुई युवती सुप्रसिद्व मछली बाजार पहुँची। इतनी बड़ी मात्रा में मछली की खरीद फरोक्त का दृश्य देखकर युवती आश्चर्य चकित थी। युवती की नजर मछली की खुदरा दुकान पर एक बगांली बाबू पर पड़ी। बगांली बाबू ने आधा किलो की एक मछली खरीदी और चार टुकड़ो में कटवाली। पूछे जाने पर पता लगा कि बंगाली बाबू के घर मे चार सदस्य हैं। अतः मछली को चार टुकड़ो में बाँटा गया है। अगले दिन युवती कार्यशाला स्थल पहुँच गई। कार्यशाला का विषय था–खाद्य सुरक्षा में मत्स्य एवं मात्स्यिकी का योगदान। उपघोषणा हुयी कि कार्यशाला का शुभारम्भ एक पारम्परिक कोली नृत्य की प्रस्तुती से हुआ। तत्पश्चात देश के शीर्ष कोटी के व्यवसायी मि. घोष ने गुणवत्ता युक्त भारतीय मत्स्य उत्पादो का निर्यात कर विश्व बाजार मे ख्याति प्राप्त की है और इसका श्रेय मि. घोष की व्यवसायिक कुशलता और देश के मात्स्यिकी शोध संस्थानों को दिया जाता है। इसके उपरान्त एक वैज्ञानिक महोदय का भी सम्मान किया गया। वैज्ञानिक महोदय ने मछली के नन्हे–नन्हे गुण सूत्रों को पावल की तरह चिन्हित कर उसके प्रजनन व्यवहार को समझने में योग्यता प्राप्त की थी। कार्यशाला के मघ्यान्ह में भोजन व्यवस्था की गई। कई प्रकार की भोजन सामग्री के बीज विशेष रूप से महाराष्ट्र से मंगाई गई पम्फ्रेट मछली की करी सभी के आकर्षण का केन्द्र बनी हुई थी। कार्यशाला के द्वितीय सत्र में कई शोध पत्र प्रस्तुत हुए एक विशेष व्याख्यान भी दिया गया । युवती को भी अपना व्याख्यान प्रस्तुत करने का अवसर मिला। युवती ने कहा– मैं एक मछली हूँ मैंने अनुभव किया है कि मनुष्य के सामान्य जीवन से लेकर सामाजिक, व्यवसायिक, शैक्षणिक और आर्थिक सभी क्षेत्रों में मेरी महत्वपूर्ण भागीदारी है। मेरे योगदान की निरन्तरता के लिए आवश्यक है कि प्रग्रहण और संवर्धन के साथ साथ मेरे संरक्षण और शोध विज्ञान पर भी लगातार कार्य किया जाए। मेरा जीवन अत्यन्त रहस्यमय है और प्रत्येक रहस्य का परिणाम अलग–अलग तरीके से मेरे द्वारा मानव सेवा करना है। अंग्रेजी के जिन माह के नाम में र अक्षर नहीं है इन महिनों में मैं प्रजनन करती हूँ जिसके लिए मुझे संरक्षण चाहिए। मेरे प्रारम्भिक अवस्था में स्फुटित अण्ड़ो से निकले बच्चों की आगे चलकर प्रजनन क्षमता अच्छी रहती है। भोजन के साथ मिट्टी में पनपरहे सुक्ष्मजीव और अन्य तत्व मेरी पाचन शक्ति के लिए वरदान है। कम पानी में भी रह सकती हूँ। मेरे जीवन की प्रत्येक प्रतिक्रिया पानी की गुणवत्ता पर आधारित है। कम पानी में रखने के लिए किसी

का अपना वचन याद आया और अगले दिन साधु बाबा के अजंली जल में वह नन्ही सी मछली पुनः वापिस आ गई। साधु बाबा ने कहा —बेटा क्या अभी भी तुम्हारी कोई इच्छा बाकी है। मछली ने कहा बाबा मैंने अपने महत्व को जान लिया है फिर भी यदि आप मुझे कुछ दे सकते है तो अगले जन्म भी मुझे मछली ही कीजो। (इस कहानी की कथा वस्तु काल्पिनिक है तथा किसी वास्तविक घटना से कोई सम्बन्ध नहीं है। लेखक का मात्र उद्देश्य है कि मछली के महत्व का उद्गार हो सके) ।

जनपद चम्पावत की नदियों में महाशीर संरक्षण से ईकोटूरिज्म की अपार सम्भावनायें

आर.एस.पतियाल, ए. वराट, प्रेम कुमार एवं पी.सी.महन्ता
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

जनपद चम्पावत उत्तराखण्ड का नवसृजित राज्य है पूर्व में नेपाल की सरहद, उत्तर में जनपद पिथौरागढ़ दक्षिण में ऊधमसिंह नगर एवं पश्चिम में अल्मोड़ा जिला द्वारा घिरा हुआ है। इस जनपद में प्रकृति–प्रदत्त जल संसाधन प्रचुरता में हैं। यहाँ पर बहने वाली प्रमुख नदियों में काली, सरयू, लधिया तथा लोहावती हैं तथा झील के रूप में श्यामलाताल प्रसिद्ध है। इन जल संसाधनों में आश्रय पाने वाले जीवों में मत्स्य सम्पदा संसाधन प्रमुख है। परन्तु इन पहाड़ी नदियों, झीलों में प्रवासित मछलियों को मानव जनित भौतिक विकास, औद्योगीकरण हेतु प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुन्ध असंगत दोहन का सामना करना पड़ा है। मत्स्य सम्पदा को विनाश के कगार पर धकेलने में अवैधानिक मत्स्य दोहन, ब्लीचिग, डाईनामाईट, रासायनिक पदार्थों का उपयोग प्राकृतिक आवास क्षरण तथा पेड़ो की अंधाधुन्ध कटाई, सड़क निमार्ण से सिल्टेशन का बढ़ना है। सर्वोपरि में इस सिल्ट बाढ़ को रोककर मत्स्य आवास हेतु पूल का निमार्ण करने वाले पत्थरो का अंधाधुन्ध एवं अवैधानिक दोहन ऐसा कारण बना कि पहले लधिया नदी में जो छोटे–छोटे तालाब दिखा करते थे (जिनमें मछलियां आवास, ब्रीडिग एवं रियरिग करती थी) अब अमोड़ी से लेकर चल्थी तक एक भी तालाब नहीं दिखा करते है। नदी का पानी भी वालू के ढेर में रिसता हुआ दिखता है। इन पत्थरों के वोल्डरो के निस्कासन से बाढ़ को बढ़ावा भी मिला। इन सबका परिणाम यह हुआ कि पहले प्रचुरता में पायी जाने वाली मत्स्य सम्पदा का विलोप हो रहा है। एक समय था लधिया में 30–40 किग्रा. के महाशीर पकड़ में आते थे। सुप्रसिद्ध एंगलर जिम कावेर्ट से लेकर विजय सोनी जैसे एंगलर इस क्षेत्र में एंगलिग हेतु पर्दापण करते थे परन्तु

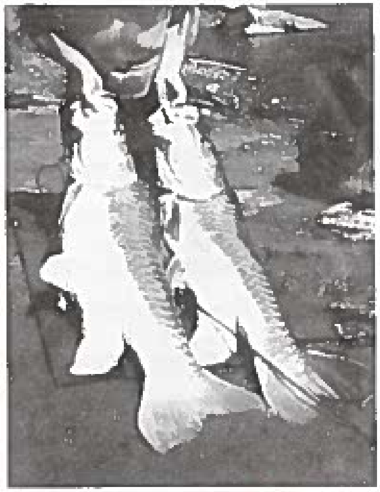

पंचेश्वर (चम्पावत) काली नदी से पकड़ी गयी महाशीर

रहा। विभिन्न स्थानों पर कैच/यूनिट/एफर्ट (ग्राम/व्यक्ति/ प्रतिदिन) 537.01 से 5000 ग्राम रहा, बकौल चल्थी में निवास कर रहे होशियार सिंह कहते हैं ''हम पहले चूल्हा जलाकर कढ़ाई चढ़ाते थे फिर मछली मारकर लाते थे'' अर्थात पहले मछलियां प्रचुर मात्रा में थीं।

जनपद चम्पावत जिले की प्रमुख नदियों में टार प्यूटीटोरा, टार–टार, साइजोथोरेक्स, वगैरियस, वेरिलियस, गारा, डेरो, डायोचिलस और निमोचिलस आदि प्रजातियां पायीं जाती हैं। मत्स्य पालन में प्रयोग में लायी जाने वाली मछलियों में रैन्बोट्राउट, सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प, कॉमन कार्प, चम्पा 1, चम्पा 2 प्रमुख मछलियां हैं। मत्स्य शोध विकास में डी.सी.एफ.आर भीमताल का सेन्टर चम्पावत तथा अन्य संस्थान मत्स्य पालन के क्षेत्र में अहम भूमिका निभा रहे हैं। क्षेत्र में कई किसान मत्स्य पालन को अपनी अजिविका का महत्वपूर्ण भाग मानकर मत्स्य पालन को अपना रहे हैं।

महाशीर हौट–स्पौट

जब मछलियों की बात करते हैं तो चम्पावत जिला एक ऐसा हौट–स्पौट है जहाँ वर्ष के अधिकांश महीने विश्व भर के एंगलर इस क्षेत्र में भ्रमण करते हैं क्योंकि कहा जाता है कि विश्व में सर्वाधिक महाशीर सम्पन्न नदी है इस जिले में बहने वाली 'काली' नदी। महाशीर एक ऐसी प्रजाति है जो विश्व भर में स्पोर्ट फिश, गेम फिश, गोल्डन महाशीर के नाम से जानी जाती हैं। आखेटक इस महाशीर को फाईटर फिश के रूप में जानते हैं। इस कारण इस फाईटर फिश की चुनौती को स्वीकार कर, मत्स्य क्रीड़ा हेतु यहां अमेरिका इंग्लैन्ड, जर्मनी, नार्वे कनाडा आदि देशो के एंगलर यहाँ आते हैं। इन एंगलरो ने अमूनन 50 किग्रा. तक के महाशीर यहाँ पकड़े हैं। चम्पावत जिले के एकमात्र एंगलर एवं एंगलर गाईड श्री रमेश राय कहते हैं कि सितम्वर से फरवरी तक पंचेश्वर क्षेत्र में देश विदेश के मत्स्य आखेटक भ्रमण करते हैं तथा महीनो तक यहाँ रह कर एंगलिग करते हैं। इसके साथ नॉर्थ, ईस्ट, आर्मी अधिकारी तथा अन्य लोग भी लगातार यहां आते हैं। इस क्षेत्र में पायी जाने वाली महाशीर मछली से अकर्षित होकर सात समुद्र पार से लेकर नॉर्थ, ईस्ट तथा विभिन्न क्षेत्र से पर्यटक फिसिग स्पोर्टस हेतु चम्पावत आना इको टूरिज्म के विकास की सम्भावनाओं को इंगित करता है। अतः आज आवश्कता है कि हम अपने यहां के संसाधनो को जाने तथा उसका उचित संवधर्न एवं संरक्षण कर अपने आर्थिकी का विकास करें। इस उपक्रम में – कुमायूं मंडल विकास निगम के पहल पर ''मिलेनियम एंगलिग फैस्टीवल'' का आयोजन किया गया जिसमें एंगलर, मत्स्य वैज्ञानिक, एन.जी.ओ. तथा स्थानीय लोगों ने सहभागिता की। इस दौरान महाशीर के जीवन

तथा विभिन्न सरकारी संगठनो, एन.जी.ओ. के सहयोग से एक ऐसा अभिनव कार्य रूपरेखा बनायी जा सकती है जिससे ईकोटूरिज्म बढ़ाने के साथ–साथ महाशीर संरक्षण तथा स्थानीय लोगों को अर्थिक लाभ एवं रोजगार प्राप्त हो।

"विभिन्न विभागों के बहुउदेशीय उदेश्यों के आधार पर उपरोक्त निर्दिष्ट रेखांकित कार्यक्रम से महाशीर संरक्षण से ईकोटूरिज्म को सशक्त, संगठित तथा आम आदमी के पहुँच परक, क्षेत्रीय युवको हेतु रोजगार परक बनाने, और अधिक व्यवहारिक एवं व्यवसायिक रूप देने हेतु सामूहिक रूप से कार्यक्रम को क्रियान्वित किया जा सकता है।"

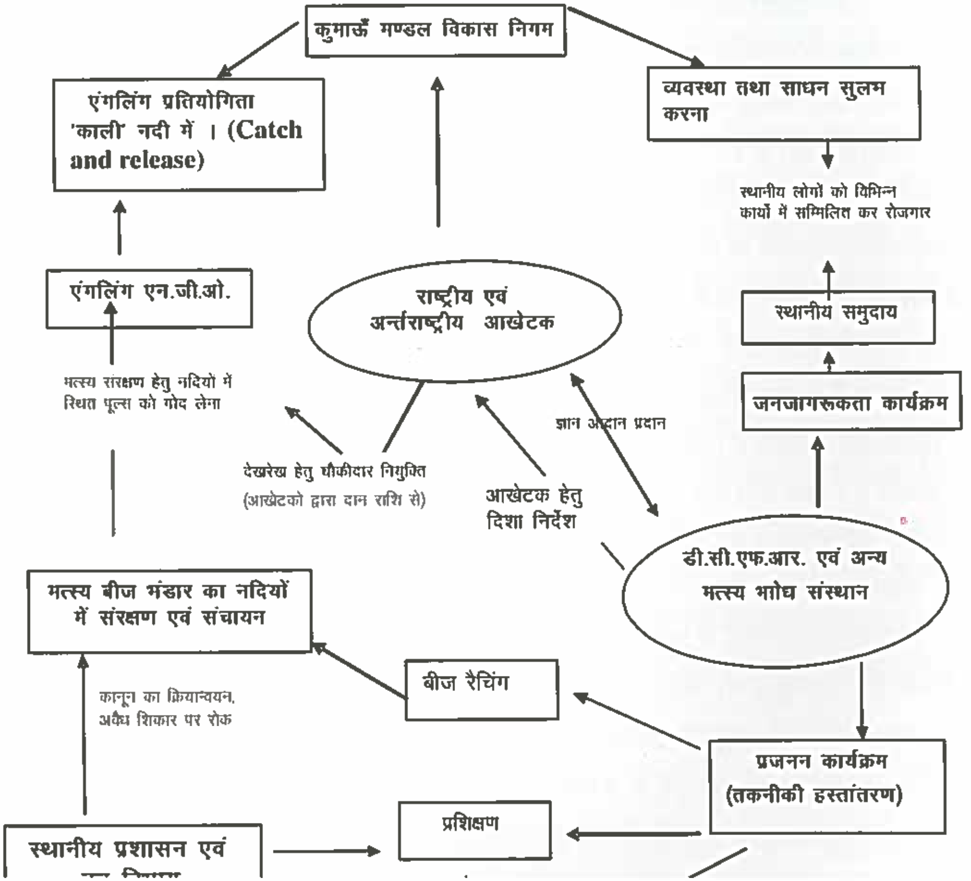

पर्वतीय क्षेत्रो में नील क्रान्ति द्वारा आर्थिक–सामाजिक विकास की अपार संभावनाएँ

एस. कुमार, एच. सी. बिष्ट एवं ममता जोशी

जन्तु विज्ञान विभाग, डी. एस. बी. परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल।

पर्वतीय क्षेत्र में जहाँ जनसंख्या कभी बहुत कम थी, आज निरन्तर वृद्धि हो रही है जिससे पहाड़ो का आर्थिक–सामाजिक तन्त्र असंतुलित हो रहा है। बेताहाशा बेरोजगारी व पलायन अपना सिर उठा रहे हैं। उत्तरांचल में मुख्य नदियों की लम्बाई लगभग 3500 किमी. है तथा झीलों का क्षेत्रफल लगभग 400 हेक्टेयर है। इस जल क्षेत्र में गहन व संकलित मत्स्य पालन करने से इस क्षेत्र की नहीं वरन् सम्पूर्ण प्रदेश की आर्थिक–सामाजिक स्थिति मजबूत की जा सकती है। जल पारिस्थतिकी का संरक्षण भी मत्स्य पालन से संभव हो सकता है। इस क्षेत्र में प्रचुर जल संपदा का जो नदियों, झीलों व तालाबों के रूप में उपलब्ध है अभी तक व्यवहारिक व व्यवसायिक रूप से उपयोग नहीं किया जा सका है। पिछले एक दशक से यहाँ की जनता पारम्परिक फसलों के साथ–साथ फल व सब्जियों का उत्पादन बखूबी कर रही है। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। नदी, नालों व झीलों के आस–पास अपनी भूमि में किसान सिंचाई हेतु बाँध बनाते है उन छोटे–छोटे बाँधों को गहन मत्स्य–पालन तालाब के रूप में प्रयोग कर मत्स्य उत्पादन किया जा सकता है। व्यापारिक स्तर पर मत्स्य उत्पादन करने से पर्वतीय क्षेत्र में पौष्टिक आहार की कमी को दूर किया जा सकता है। मछली, पोषक तत्वों व खनिज लवणों से युक्त होने के साथ–साथ एक सुपाच्य आहार है। अतः इस क्षेत्र में कुपोषण की विकट स्थिति को दूर करने में मत्स्य एक उपयोगी माध्यम हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में मत्स्य पालन हेतु उपयुक्त देशी व विदेशी प्रजातियां जैसे महाशीर, साइजोथोरेक्स, रोहू, कामन कार्प और ट्राउट की प्रजातियां पायी जाती है। यह एक हर्ष का विषय है कि पिछले कुछ वर्षों में कुमाऊँ व गढ़वाल मण्डलों में सक्रिय किसानों ने मछली पालन का कार्य प्रारम्भ किया है। परन्तु उच्च कोटि के मत्स्य बीज, उचित मत्स्य प्रबन्धन व प्रशिक्षण की कमी से मत्स्य उत्पादन संम्भावनाओ के अनुरूप नहीं हो पा रहा है। आज के आधुनिक युग में कोई भी व्यवसाय किसी जाति विशेष पर निर्भर नहीं रह गये है, इसलिये संकलित मत्स्य पालन के द्वारा इस क्षेत्र की विकास की संम्भावनाऐं और अधिक बढ़ सकती हैं। संकलित मत्स्य पालन में मीन के साथ कुक्कुट पालन, बत्तख

निराकरण और शिकार तथा विपणन आदि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उपरोक्त तकनीकी के बारे में संक्षेप में यहाँ उल्लेख किया जा रहा है जिससे पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्र के मत्स्य पालक व मत्स्य प्रसार वैज्ञानिक लाभान्वित होगें।

सर्वप्रथम इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखकर मत्स्य पालक को तालाब निर्माण विधि का विशेष ज्ञान होना आवश्यक है जो कि निम्न प्रकार है:

तालाब निर्माण व प्रबन्धन

तालाब निर्माण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके लिये छोटे–छोटे 0.3–0.5 एकड़ से लेकर 0.5 हेक्टेयर माप के तालाब उपयोगी होते हैं। तालाब मिट्टी के ही बनाये जाने चाहिए। तालाब में उचित जल प्रवेश व निकास का प्रबन्ध होना चाहिए। जल निकास का प्रबन्ध तली व सतह दोनों ओर से होना चाहिए जिनसे इच्छानुसार जल स्तर बदला जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह से मत्स्य उत्पादन को कई गुना बढ़ाया जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह बने रहने से जल के साथ प्राकृतक भोजन व घुलित ऑक्सीजन प्रवेश करती रहती है दूसरी ओर जल में विभिन्न प्रकार के उपापचय जैसे अमोनिया, नाइट्रोजन, कार्बन डाई–आक्साइड जो मछलियों के लिये हानिकारक होती है जल निकासी के साथ तालाब से बाहर निकलते रहते हैं। एक के बाद दूसरा तालाब बनाने से मत्स्य फार्म प्रबन्ध व विपणन में विशेष सुविधा होती है। तालाब का खादीकरण एक नाजुक प्रक्रिया है। निर्मित तालाब को पानी से भरने के पश्चात् 2–5 टन गोबर प्रति हेक्टेयर तथा 250 किग्रा. (अनबूझा) चूना प्रति हेक्टेयर डाला जाना चाहिए। पुराने तालाबों में इसकी मात्र कम कर दी जाती है क्योंकि प्राकृतिक तल होने से उत्पादन का संन्तुलन हो जाता है। सप्ताह में एक बार पानी की भौतिक व रासायनिक गुण जैसे पी. एचमान, घुलित ऑक्सीजन, नाइट्रेट, फास्फेट और क्षारीयता की जाँच अवश्य करनी चाहिए (तालिका–1)। तालाब के बाँध की चौड़ाई कम से कम 3–4 मीटर होनी चाहिए। जिसमें कृषक आसानी से फल व सब्जी का भी उत्पादन कर सकता है। फल वृक्ष तालाब के पश्चिम दिशा में ही लगाने चाहिए। नदी की ओर भू–क्षरण को रोकने वाले पेड़ तालाब से थोड़ा हटकर ही लगाने चाहिए।

मत्स्य बीज संचय

तालाब निर्माण के बाद उसमें संख्या व उच्च गुणवत्ता का मत्स्य बीज संचयन अति महत्वपूर्ण कार्य

अधिक अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य बीज संचयन के समय वैज्ञानिक तकनीकी का ध्यान रखकर सतह भोजी, मध्य सतह भोजी व तल भोजी प्रजातियों की संख्या क अनुपात ठीक होना चाहिए (तालिका–2)। अधिक संचय दर से अच्छी पैदावार नहीं मिलती है। नई तकनीकी से नपुंशक मछलियों का पालन भी लाभकारी हो सकता है। मछलियों में केवल मादा पैदा करने की विधि विकसित कर ली गई है, जिससे वांछित लिंग की मछली का उत्पादन किया जा सकता है।

नर मछली पैदा करने के लिये 17 अल्फा मिथाइल टैस्टोस्टेरान हारमोन तथा मादा मछली हेतु 17 बीटा स्ट्रेडियाल हारमोन का उपयोग किया जाता है। मछलियों मे हैचिंग के उपरान्त उक्त हारमोन को कृत्रिम भोजन के साथ मिश्रित करके दिया जाता है। इसके अधिक उपयोग से मछली नपुंषक हो जाती है। हारमोन के अतिरिक्त मछलियों में उनके आनुवंशिक तत्वो में थोड़ा परिवर्तन कर नर, मादा तथा नपुंशक मछलियां पैदा की जा सकती हैं। इसके लिये मत्स्य शरीर से प्राप्त अण्डाणु तथा शुक्राणु गर्म अथवा ठण्डी परिस्थिति में एक्सरे प्रघात प्रदान कर लिंग परिवर्तन किया जा सकता है।

कृत्रिम भोजन

गहन मत्स्य पालन पूर्णरूप से कृत्रिम भोजन पर आधारित होता है। अच्छी मत्स्य पैदावार के लिये उच्च श्रेणी का कृत्रिम आहार होना अत्यन्त आवश्यक है। कृत्रिम भोजन में मछली के लिये आवश्यक सभी अवयव उचित मात्र में जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण और विटामिन आदि मिश्रित रहते हैं। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में उपलब्ध प्राकृतिक भोजन कपामे शीघ्र वृद्धि व अच्छे मत्स्य उत्पादन योग्य नहीं माना जाता है। इसलिये तालाबों में मत्स्य पालन हेतु उचित दर से कृत्रिम भोजन दिया जाना चाहिए। यह भोजन मत्स्य अवस्था के आधार पर अलग–अलग ढंग से दिया जा सकता है। फ्राई अवस्था में भोजन का सूखा चूर्ण बनाकर जल सतह में छिड़क देना चाहिए। अंगुलिका अवस्था में मिश्रित कृत्रिम भोजन का घोल बनाकर तालाब के चारो ओर छिड़क देना चाहिए। अंगुलिका अवस्था के बाद की अवस्था में दो विधियों से भोजन दिया जा सकता है। पहली विधि में भोजन को मिट्टी के बर्तनों में भिगो कर तालाब के निश्चित स्थानो पर डुबो दिया जाता है दूसरी विधि में नाइलोन के बोरे (चूने या उर्वरक के) की तली में 10–15 छिद्र किये जाते हैं। उस बोरे में भोजन रखकर एक बाँस सीधा गाड़कर उसपर बोरे को बाँध देते हैं। बोरा जमीन से 20 इंच ऊपर रहना चाहिए। भोजन के समय तालाब मे जल प्रवाह रोक देना चाहिए। यह विधि पर्वतीय क्षेत्रों के जल प्रवाहित तालाबों के लिये सर्वोत्तम विधि है। आधुनिक स्वचालित भोजन

मत्स्य बीज उत्पादन

पुरानी पारम्परिक तरीकों में मत्स्य बीज नदियों व अन्य जल धाराओं से फ्राई या अंगुलिका के रूप में एकत्रित कर तालाब में पाला जाता है। जिसमें अच्छी गुणवत्ता का बीज नहीं मिल पाता है। अतः मछली के बीज का उत्पादन वैज्ञानिक विधि द्वारा किया जाना चाहिए। यह विधि दो प्रकार की हो सकती है। प्रथम पारम्परिक हापा विधि है जिसके द्वारा इस क्षेत्र के मत्स्य पालक अपने तालाब में भी मत्स्य बीज का उत्पादन कर सकते है। दूसरी विधि आधुनिक सर्कुलर हैचरी की है जिसमें मत्स्य को कृत्रिम ढंगों जैसे पीयूष ग्रन्थि इन्जेक्शन द्वारा अथवा ओवाप्रिम एवं ओवाटाइड हार्मोनों से उत्प्रेरित कर स्वस्थ व उच्च गुणवत्ता वाले मत्स्य बीज का उत्पादन किसानों द्वारा उपलब्ध किया जा सकता है।

मछलियों के रोग

मत्स्य के वातावरण में थोड़ा बहुत परिवर्तन मत्स्य पालन को अधिक प्रभावित नहीं करता है लेकिन अधिक प्रदूषण इसके लिये हानिकारक होता है। गहन मत्स्य पालन में अपेक्षाकृत अधिक रोगों का प्रकोप पाया जाता है। कम तापमान के दौरान ही मत्स्य रोगों का आक्रमण होता है इसलिये समय–समय पर तालाब के पानी व मछलियों का परीक्षण अवश्य करना चाहिए। शीतकाल में तालाब में जाल चलाना चाहिए। रोग का संक्रमण होने पर तुरन्त नियत मात्र में चूना डालना चाहिए। पोटेशियम परमैग्नेट का 5 प्रतिशत घोल और वालमिड का उचित दर से छिड़काव रोग नियंत्रण में सहायक सिद्ध होता है।

मछलियों का शिकार व विपणन

तालाब का अच्छा प्रबन्ध मत्स्य शिकार व विपणन में बहुत लाभकारी होता है। गहन मत्स्य पालन में लगभग एक साल में मछलियां बेंचने लायक हो जाती हैं। इस पद्धिति में मछलियां एक समान वृद्धि करती हैं इसलिये इन्हें पोषण तालाब से विपणन तालाब में रख देनी चाहिए। मत्स्य शिकार के लिये सैदव जाल (ड्रेग नेट) का ही उपयोग करना चाहिए। जाल को प्रयोग करने से पहले पोटेशियम परमैग्नेट के 5 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक डुबा लेना चाहिए, इससे मत्स्य तालाब में किसी प्रकार के संक्रमण को होने से रोका जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्र में कुछ ब्राह्मण तथा कुछ वैष्यों को छोड़कर प्रायः सभी लोग मछली खाते हैं इसलिये यहां पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य विपणन में कोई बड़ी समस्या नहीं हो सकती है।

तालिका 1: अच्छे उत्पादन के लिये तालाब की भौतिक व रासायनिक गुणों की विशेषता

पी. एच. मान	07–09
घुलित ऑक्सीजन	06–11 पी. पी. एम.
अविलता	150–200 पी. पी. एम.
क्षारीयता	90–190 पी. पी. एम.
नाइट्रेट	0.2–0.6 पी. पी. एम.
फास्फेट	0.1–0.4 पी. पी. एम.

तालिका–2 : मत्स्य पालन में प्रजातियों का संचय अनुपात (संचय दर 2500 अंगुलिकाएं प्रति 0.5 हेक्टेयर)

असन स्वभाव	प्रजाति	6 प्रजाति संवर्धन
सतहभक्षी	सिल्वर कार्प	300–500
	कतला	250–400
मध्य सतहभक्षी	महाशीर	300–500
	रेहू	300–600
तलभक्षी	कामन कार्प	100–300
	साइजोथोरेक्स	100–200

तालिका 3 : 2500 अंगुलिकाओं के लिये कृत्रिम भोजन की औसत मात्रा किग्रा. प्रतिदिन

अवधि	कृत्रिम आहार किग्रा. प्रतिदिन
प्रथम 120 दिन	1.5
द्वितीय 90 दिन	3.0
तृतीय 90 दिन	4.5
चतुर्थ 90 दिन	6.0

उत्तराखंड में ओक तसर संवर्धन, कीट पालकों की समस्यायें एवं समाधान

एम.सी. जोशी

क्षेत्रीय तसर अनुसंधान केन्द्र भीमताल (नैनीताल) उत्तराखंड

उत्तराखंड में ओक तसर रेशम उत्पादन, ग्रामीण कुटीर उद्योग है। ओक तसर कीट (एन्थेरिया प्रायली जे) स्वभावतः कमजोर द्विपज होता है। यह कीट ओक की पत्तियों को खाकर कोसा निर्माण करता है। सामान्यतः यह वर्ष में दो जीवन चक्र पूरा करता है। यह कीट प्यूपा अवस्था में शीत निष्क्रिय रहता है प्यूपा जाड़े के मौसम प्रारम्भ होते ही शीतनिष्क्रिय हो जाता है ।इसका पहला जीवनचक्र बसन्त ऋतु में पूरा हो जाता है। दूसरा पतझड़ के समय ।यह भी देखा गया है कि कभी–कभी बसन्त ऋतु की फसल का कुछ भाग बहुपज हो जाता है ।तापमान, आद्रता व दीप्तिकाल बढ़ाकर इसके बढ़वार की गति को बढ़ाया जा सकता है ।

उत्तराखंड में ओक वन सम्पदा की स्थिति

इस राज्य में ओक वन सम्पदा करीब 3.05 लाख हेक्टेयर वन क्षेत्र में फैला है। इस क्षेत्र में ओक की कई किस्में उपलब्ध हैं ।जैसे क्वेर्कस ओलीगोट्राईकोफोरा (बांज) क्वेर्कस हिमालयाना (मोरू) क्वेर्कस सेमीकर्पिफोलिया (खरसू) क्वेर्कस ग्लाका व क्वेर्कस सिराटा (मनीपुरी बांज) आदि ।ओक की भिन्न–भिन्न किस्मों के पौधे अलग–अलग समय पर प्रस्फुटित होते हैं। यहां तक की कई बार एक ही जाति के पौधे भिन्न–भिन्न अवधियों में भिन्न–भिन्न ऊँचाईयों पर प्रस्फुटित होते हैं। इनमें से सबसे अधिक क्वेर्कस ओलीगोट्राईकोफोरा (बांज) समुद्र तल से 1800 फिट से 7000 फिट तक की ऊँचाई पर पाया जाता है। इस प्रजाति के पौधों पर पत्तियां जल्दी प्रस्फुटित होकर जल्दी ही परिपक्व हो जाते हैं ।प्रयोगों के आधार पर कटाई–छंटाई से इसमें जल्दी ही नई पत्तियां निकल आती हैं ।तथा पुराने पत्तों को काटने के बाद करीब 15 से 20 दिनों में नये पत्ते आ जाते हैं। क्वेर्कस हिमालयाना (मोरू) समुद्र तल से 5000 फिट से 7000 फिट तक की ऊँचाई पर पाया जाता है। इस प्रजाति की पत्तियां धीरे–धीरे परिपक्व होती हैं। क्वेर्कस सेमीकर्पिफोलिया (खरसू) उच्च उंचाई पर करीब–करीब स्नों जोन तक (समुद्र तल से 7000 फिट से 9000 फिट) पर उगता है ।उत्तराखंड में इसके विषालकाय वृक्ष प्राकृतिक रूप से उगते हैं ।इसके अतिरिक्त

उत्तराखंड में ओक तसर कीट पालकों की स्थिति

उत्तराखंड की कुल जनसंख्या में से लगभग 70 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्र में रहतें हैं । ये लोग मुख्य रूप से कृषि एंव कृषि सहयोगी कार्यों पर आश्रित हैं। ऊँचाई पर रहने वाले किसानों को वर्षा पर आधारित खेती करनी पड़ती हैं जिनमें रवी फसल में गेहूं, जौ, चना व खरीफ में धान, मक्का व अन्य मोटे अनाजों की खेती करते हैं । अधिकतर किसान खाली समय में जंगल से लकड़ी व माइनर उत्पाद (जैसे झूला, मौस घास इत्यादि) एकत्र कर बाजार में बेच कर अपनी आजीविका चलाते हैं। ऊँचाई पर स्थित गांवों से कीटपालकों को चयनित कर मई–जून माह में तसर कीटों की आपूर्ति की जाती है । ये किसान समूह बनाकर पालीहाउस में तसर कीटों का कीटपालन का कार्य सम्पादित करते हैं । इसमें प्रत्येक किसान को 500 ग्राम अन्डे (तसर बीज) की आपूर्ति की जाती है । इस आपूर्ति तसर बीज से 60 से 65 दिनों में 18000 के करीब कोसों का निर्माण आसानी से प्राप्त किया जाता है । जिसका बाजार भाव करीब 9000 रुपये होता है । इस तरह प्रति किसान को 60 से 65 दिनों में उसके परिश्रम के अनुसार 9000 रुपये तक की आमदनी बहुत कम लागत पर हो जाती है । वर्तमान में प्रदेश में 500 से 600 के करीब किसान इस क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं । इस तरह किसान की आय के साथ–साथ वन सम्पदा का बेहतर उपयोग हो रहा है ।

ओक तसर कीटपालकों की समस्यायें

ओक तसर रेशम को बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है । इनमें कुछ निम्न प्रकार से हैं ।

1. कीटपालकों को उनके गांव के आस–पास 60–65 दिनों तक ही रोजगार उपलब्ध हो पाता है ।
2. विपरीत भौगोलिक परिस्थितियों के कारण कीटपालकों को खाद्य पौधों तक पहुंचने में अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है ।
3. कीट पालकों के पास उचित कीटपालन सामग्री एंव गृहों का अभाव है ।
4. कीटपालकों को अच्छा व रोगमुक्त बीज चकत्तों की आपूर्ति समय से न हो पाना भी मुख्य समस्या है।
5. रोग मुक्त बीज की आपूर्ति मांग के अनुरूप न होना ।
6. बीमारियों से फसल का नुकसान ।

8. ओक तसर के लिए बाजार का अभाव होना भी प्रमुख समस्या है । जिसके कारण कीटपालक को उसके उत्पाद का उचित दाम नहीं मिल पाता है ।

समाधान

1. कीटपालन के उपरान्त कोसों से धागाकरण व कताई–बुनाई का प्रशिक्षण देकर कार्य दिवसों की संख्या को आगे बढ़ाया जा सकता है ।

2. ओक की विभिन्न प्रजातियों में से सबसे अधिक बढ़वार वाली प्रजाति क्वेर्कस सेराटा को गांव के आस–पास खाली पड़ी जमीनों में लगाकर तसर भोज्य पौधों की सम्पदा को बढ़ाया जा सकता है।

3. भारत सरकार द्वारा प्रायोजित, ग्रामीण योजनाओं से कीटपालकों के लिए गृह निर्माण व कीटपालन सामग्री की व्यवस्था की जा सकती है ।

4. तसर उद्योग से जुड़े विभिन्न स्वंय सेवी संस्थाओं व सरकार के विभागों द्वारा तसर के रोगमुक्त किटाण्डों की आपूर्ति समय से सुनिश्चित करनी चाहिए तथा उसी प्रकार अपनी कार्ययोजना बनानी चाहिए ।

5. कीटपालकों को उनकी क्षमता अनुसार कीटाण्ड उपलब्ध कराना आवश्यक है। ताकि उनसे अधिक से अधिक कोसों का निर्माण हो जाय व उसी अनुपात में किसान की आमदनी है ।

6. तसर कीटों पर लगने वाली बीमारियों; माइक्रो स्पोरिडियन, फंगस, बैक्टिरिया व वायरस की पूर्ण जानकारी समय से उपलब्ध करायी जाय तथा इन बीमारियों से बचाव की जानकारी/दवाओं को कीटपालकों को उपलब्ध कराया जाय ।

7. किसानों को मार्गदर्शिन हेतु स्वस्थ, चरित्रवान ग्रामीण युवकों का चुनाव कर उन्हें प्रशिक्षित किया जाय इन युवकों ;रेशम साथी को निश्चित मानदेय पर कीटपालकों के मार्गदर्शन/सहायता हेतु लगाया जाय ।

8. कीटपालकों के लिए बाजार उपलब्ध कराना आवश्यक है। इसके लिए सरकारी स्तर पर कच्चा माल बैंक की स्थापना का प्रयास अच्छा रहेगा। ताकि कीटपालक को बिचौलियों के प्रभाव से बचाया जा सके।

उत्तराखण्ड का लोकगीत

देवसिंह पोखरिया एवं रंजना शाही

एस.एस.जे. परिसर अल्मोड़ा एवं जी.जी.आई.सी. चौखुटिया

गीत वाद्य और नृत्य इन तीनो के समन्वित रूप को संगीत कहा जाता हैं। इन तीनो में गीत की महत्ता सर्वाधिक हैं नृत्य वाद्य का और वाद्य नृत्य का अनुवर्ती होता है। गीत का मूल स्वर समूह है। स्वर नाद के आश्रित रहता है। संगीत दर्पण नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि नाद से वर्ण, वर्ण से शब्द, शब्द से वाक्य और वाक्यो से भाषा निष्पाद होती हैं। भाषा से संसार का व्यवहार चलता है। अतः सम्पूर्ण जगत नाद के अधीन है। नाद के आंदोलित होने पर ही संगीत की सृष्टि होती है। परम्परा से लोक में प्रचलित नैसर्गिक संगीत ही लोकसंगीत है।

उत्तराखण्ड में लोक संगीत की सुदीर्घ परम्परा मिलती है। यहाँ के लोकमानस में यह विश्वास है कि संगीत और नृत्य के आदि गुरु शिव पार्वती है। उन्हीं से लोक संगीत की धारा विकसित हुई। किसी भी क्षेत्र के लोकसंगीत की अपनी विशेषताऐं होती है। उसमें वैयक्तिकता एवं कलात्मकता का अभाव होता है। वह स्वाभाविक सरल और सहज होता है। उसमें पुनरावृत्ति की प्रवृत्ति और टेक पदों की प्रधानता होती हैं। कुछ अपवादो को छोडकर इसका गायन सामूहिक होता है। यह मौखिक रूप से परम्परा में प्रचलित हैं। इसमें शब्द और धुन में साम्यता होती है, काव्यत्व की अपेक्षा स्वर और ताल की लय का अधिक महत्त्व होता है। अधिकांश लोकगीत सप्तक के पूर्वांग में गाए जाते है। गाथा गीतों में एकाधिक राग और तालों का मिश्रण होता है। पृष्ठ भूमि में सुर देने की प्रवृत्ति लोक संगीत की प्रमुख विशेषता है।यहा का लोक संगीत पहाड़ के उतार चढ़ाव की ही भाँति विविधताओं से युक्त है। उत्तराखण्ड के लोकगीतो में लोक संगीत के सहयोगी तत्वों नृत्य एवं वाद्य का समुचित समावेश मिलता है। कुछ लोकगीतो को छोडकर यहाँ के अधिकांश लोकगीत नृत्यपरक है। नृत्य के साथ वाद्यो का अनिवार्यतः योग रहता है।

उत्तराखण्ड के समूह गीतों और नृत्य गीतों में अधिकांशतः वाद्यो का प्रयोग होता है। एकाकी रूप में गाए जाने वाले या निभृत वन प्रान्त में गाए जाने वाले गीतों में यह संभव नहीं कि गीत के साथ समुचित वाद्य का प्रयोग किया जाय। लोक, प्रचलित वाद्य और नृत्य की इसी त्रिधारा को लोक संगीत कहा जाता है। इसमें लोक मानस का उल्लास, हर्ष सौंदर्याभिरूचि और आनंद पूर्णत्व को प्राप्त होता है। लोक मानस अपने

लोक गीतो की सांगीतिक मूर्च्छना, शब्दार्थ को न समझने वाले व्यक्ति को भी गीत के भाव, रस, विषय और अनुभूति को श्रोता तक संप्रेषित करने में समर्थ रहती है। गीतों में निहित संगीत के माध्यम से श्रोता उस मनोभूमि के स्पर्श का अनुमान लगा लेता है, जिस आधार पर गीतो के बोल गाए जा रहे हो। मुक्तक गीतो में करूणा, पीडा, श्रृंगार, उल्लास आदि का भाव संगीत के द्वारा ही मुखरित हुआ है। न्यौली, खुदेड, आदि गीतों में करूणा और पीडा को संवेदित और स्पंदित करने वाला तत्व संगीत ही है। जोड, बाजूबंद, लामण गीतो में प्रणय की भावाभिव्यक्ति गायन धार पर होती है। छपेली, चॉचरी, झोडा, झुमैलो, तांदी, चौंफुला, थडया, छोपती आदि नृत्य प्रधान गीतों में संगीत अपने उत्कृष्ट और समुन्नत रूप में अभिव्यक्ति पाता है। स्वर नियोजन के साथ ही गायक, नर्तक, श्रोत तीनों का ह्रदय स्पंदित और झंकृत होता है। स्वर क्रम के आरोह अवरोह की विभिन्न स्थितियां लयात्मक वैविद्य के साथ ही भाव वैविद्य को स्पष्ट करती चलती है। कृषि गीतो च हुडकीबौल की आवृत्तिमय आक्षिप्तिकाएँ झुमकैलो, भडरूमैलो आदि संगीत के मूर्त रूप को प्रस्तुत करती हुई गीत के भावो में प्राण फूक देती है। भडा, जागर, पांडव वार्ता, घडियाल चैती रितुरैण, ठुलखेल आदि प्रबंध गीतो व फाग या मांगल गीतो में संगीत योजना का वैविद्य पाया जाता है।आठूँ गीतो में कमनीय सुमधुर रस काकली का व्यनुनादित स्वर हिलकोर लेता है। स्त्री कंठ की मधुरिमा गीत को दिव्य गांधर्व वीणा का स्वर प्रदान करती है।

लोक संगीत में किसी न किसी रूप में शास्त्रीय संगीत के तत्व विद्यमान रहते है, बल्कि यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि लोक संगीत के परिष्कार से ही शास्त्रीय संगीत का निर्माण हुआ है। लोक में बहुत प्राचीन काल से ही संगीत की धारा प्रवाहित होती रही है। शास्त्रीय संगीत तो बहुत बाद में विकसित हुआ। शास्त्रीय दृष्टि से विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि बहुत सी राग रागिनियाँ ऐसी है, जिनके आधार पर लोक गीतों को गाया जा सकता है या जिनकी छाया लोक गीतो में विद्यमान है। लोक संगीत में कई– कई रागो में मिले जुले स्वर परिलक्षित होते है, जिससे यह निर्धारण करना कठिन हो जाता है कि अमुक गीत में किस राग की प्रधानता या प्रमुखता है। उत्तराखण्ड के लोक गीतो में दुर्गा मालकौस, पहाडी, हिंडोल, भीमपलासी, देश, पीलू, केदारा आदि रागो की छाया पायी जाती है। दुर्गा तथा मालकौस और दुर्गा तथा पहाड़ी आदि रागों के स्वर प्राय: मिले जुले रूप में पाये जाते है।

उत्तराखण्ड के सम्पूर्ण गीतो को मोटे रूप में दो भागो में बाँटा जा सकता है– 1–मुक्तक गीत और 2–प्रबंध गीत । मुक्तक तथा प्रबंध गीतो के संगीत में भिन्नता है। मुक्तक गीतो में सांगीतिक मधुरिमा और

न्यौली का गायन होता है। न्यौली को दो धुनो– **सोर्याली' व रीठागाडी'** का स्वरांकन इस प्रकार हो सकता है।

न्यौली की धुनो 'सोरयाली ' व ' रीठागाडी' का स्वरांकन इस प्रकार होता है। –

न्यौली

1–काद्‌ना काद्‌ना SSS पलू औंछ, SSS चौमासी को SSS बन SSS............. ।

2–थामी जांछ SSS, बगन्या पानी, SSS नी थामीनू मन SSS........................... ।।

1– रे रे रे ग ध ग . रे ग रे ग रे सा... सा रे ग रे . सा रे रे ग म रे सा,

सा सा सा रे ....ध ....ग रे ध ....सा ....सा ....सा ।

2– सा सा रे ध .... सा रे ग ....सा रे ध ....सा ग रे ....

सा ग रे .... सा ध ....ग रे ग ....रे ध सा............. ध सा।

जोड भी न्यौली परिवार के गीत है। न्यौली में दोनो चरण 14–14 वर्ण के होते है। ' जोड ' को दुर्गा, पहाडी, भूपाली, बिलावल तथा मालकौस रागो पर गाया जा सकता है। 'बैर' गीतो। के गायन में नारायणी, शिवरंजनी और मध्यमाद सारंग रागो की छाया देखी जा सकती है। गढवाल के ' बाजूबंद ' या ' जंगी ' गीत प्रश्नोत्तर रूप में लंबे आलाप के साथ गाए जाते है। ये 'जोड' की तरह होते है। गढवाल के 'खुदेड' गीत वासंती शोभा और नारी हृदय की करूणा को व्यक्त करते है। इनकी लय उल्लास व कारूणिक दोनों विशेषताओं से युक्त है।

छूडा गढवाल के चरवाहों के गीत है। उनमें प्रेम चित्रण की प्रधानता के साथ ही विषय भी मिलती है। ये गीत लंबी लय और उच्च स्वर में गाए जाते है।

- लोरी ' गीतों में दुर्गा, बिलावल आदि रागों तथा दादरा, कहरवा आदि तालों की छाया मिलती है। 'चैती' गीत वृंदावनी सारंग मंद्र सप्तक में, तिलक कामोद , भूपाली आदि रागो के निकट है।

चॉचरी, झोडा, छपेली, झुमैलो, चौफुला, छोपती तांदी, लामण, थड़्या भ्वीन, हौली आदि नृत्य गीतो का गायन उमंग एवं उल्लास प्रधान है। इन विभिन्न गीतों गीतो की लय दुर्गा, मध्यमाद सारंग, धानी, काफी,

है। कंठस्वर का विशेष महत्व होता है। इनमें अतुकांतका, पुनरावृत्ति और कमनीयता रहती है। इनके स्वरो में पंचम का विशेष स्थान है। इन गीतों की लय काफी, भूपाली, पहाडी, कतश्र पीलू दुर्गा झिंझोटी, देश, अभोगी, धानी, मिश्र समाज, कामोद तिलक, मालगुंजी, भीमलपासी, सोरठा जंगला काफी वृंदावनी सारंग आदि रागों के स्वरों से साम्य रखती है। पहाडी भाषा के मांगल ताल रहित होते है। ब्रज और अवधी से प्रभावित सोहर गीतो में कहरवा, दादरा, दीपचंदी से साम्य रखने वाली तालें बजती हैं।

होली के कुछ गीतों में ब्रज और अवधी भाषा का प्रभाव भी देखने को मिलता है। इन गीतो के गायन में ब्रज– अवधी प्रभावित बैठकी होली व रामलीला के गीत शास्त्रीयता के निकट या प्रायः शास्त्रीय है। ये तिलकामोद, काफी झिंझोटी, पीलू, मॉलकौस, काफी, जंगला काफी, शहाना, यमनकल्याण, युद्ध कल्याण, श्यामकल्याण, भैरवी, विहाग, जोगिया, जैजैवंती आदि रागों और दादरा, कहरवा तीन ताल, जत ताल, दीपचंदी आदि में निबद्ध रहते है। इनमें पूर्ण सप्तकी विद्यमान रहती है। जबकि कुमाऊनी और गढवाली के अधिकांश गीत अर्द्धसप्तकी या पूर्व सप्तकी पर आधृत है।

इन गीतों के साथ वाद्य के रूप में मुख्यतः हुडका और ढोलकी बजती है, इसीलिए ताल की दृष्टि से दुर्गा और मालकौस के साथ दादरा विलम्बित रूप में भी, पहाडी के साथ कहरवा और देश के साथ द्रुत दीपचंदी तालों का प्रयोग किया जा सकता है। विरह तथा करूणा–जनित भावों से परिपूर्ण गीतो की लय विलंबित होती है। अतएव ताल भी विलंबित रूप में ही चलती है। ताल के साथ इसमें स्थायी और अंतरा की सुनियोजित योजना मिलती है। इसमें मंद्र सप्तक का प्रयोग भी होता है। नीचे कुछ गीत दिए जा रहे हैं, जो उल्लिखित रागों के आधार पर गाए जा सकते हैं। रागों का उल्लेख गीतों में निहित मूल स्वरो के आधार पर ही किया गया है।

1. **मांगल फाक**

   राग– देश , ताल–द्रुत दीपचंदीः
   छोड्या छोड्या बाली कन्या, धुल् माटी को खेल
   छोड्या बाली धुल् माटी को खेल ।।
   किलै छोड्या बाली त्वीले, माणूली का खाजा।
   किलै छोडी मायूडी की कोख ।।

2. **राग**

   मेघ , ताल कहरवा /द्रुत तीन ताल

2. **चॉचरी**

राग – मालकौंस, ताल –दादरा :

कमला ग्यू खेत जन् जाये, छोटी ग्यू बाली टुटली ।

कम्ला सन्मुख जन् जाये, छोरी पिरदा टुटली ।।

कम्ला सोर की सडक मनी ओड की चीन छ ।।

छोरी सुवा का सिरान पनी सुनु की बीन छ ।।

3. **झोडा**

राग –दुर्गा, ताल – दादरा

हिट् भुली कल्यान घिंड़ार खान, ढुल ढुला दानान् का घिंड़ार पाका ।।

हिट् भुली कल्यान घिड़ार खान, रतुवा का छाल घिंड़ार पाका ।।

रतन जुहार खेल्ना मैंले धेक्यो, धन्न मेरी छाती की सै राख्यो ।

टाटुकी सुतिया दिन मैंले धेक्यो, धन्न मेरी छात्यू की सै राख्यो ।।

4. **थड्या**

स्थायी : तीले धारू बोला ये अम्बा जवैं डंग्वाल ।

स्हायक चरणः तीले धारू बोला ये कूरा सासू नैथण्या ।।

प ध सा – रे पम रेसा । रे प प । प म ध म प रे म । रे रे सारे

5. चौंफुला

राग – दरबारी , कानहडा –– तीन ताल द्रुत लय

नणद् त्यर दादु का का जायुँ च घ

दादु सुनार की ओट च ।

ओट बैठीक क्या करदो चध

नक नथूली गडॉदो च ।

होली

1. **राग**

यमन कल्याण ,ताल — बाद में जतताल, दगन में तीन ताल तथा कहरवा

2. राग–तिलकामोद , ताल दादरा

स्थायी– कैले बॉधी चीर हो रधुनंदन राजा।

सहायक चरण – कोयऊ छिडकै गुलाल हो रधुनंदन राजा।

गणपति बॉधै चीर हो रधुनन्दन राजा ।

महादेव बॉधै चीर हो रघुनन्दन राजा। ....

ऊपर के उदाहरणों को देखकर कहा जा सकता है कि उत्तराखण्ड के मुक्तक लोकगीतो में प्रायः औडव जाति के कई रागों के स्वर मिलते हैं। इनमें स्थायी और अंतरा का स्पष्ट विभाजन कम मिलता है, इसलिये अधिकांश गीत पूर्वांग या अर्द्ध सप्तकी के आधार पर ही गाए जा सकते है। वैसे भी लोकधुनो को किसी शास्त्र की परिधि मे बाँधकर विवेचित नहीं किया जा सकता। लोकगायक परंपरागत धुनो में भी अपनी ओर से कुछ न कुछ घट–बढ़ करते रहते हैं।

द्वितीय वर्ग प्रबंधक गीतो का है। कथा तत्व की प्रधानता और धर्म – भावना के प्रभाव के कारण इनमें संगीत को उस रूप में लोक गायक के द्वारा ग्रहण नहीं किया है, जिस रूप में मुक्तक गीतो में। फिर भी, कुछ गाथाए और प्रबंधात्मक गीत एसे हैं, जिनमें संगीत की के तत्वो का पूर्ण समावेश रहता है। घडियाल, जागर, रमौल, मालूसाही आदि सभी प्रबंधात्मक गीतो में संगीत की अन्विति मिलती है। इनमें मुख्य गायक के अंतिम स्वर से सहगायकों द्वारा 'सुर ' को पकडते हुए (हा SSS हे SSS) जैसा लम्बा आलाप लगता है। इसे' हेव 'या 'भाग' लगाना या भौण पूरना कहते है। यह सुर पर्याप्त अंतराल तक तक खींचकर विलंबित होता हुआ ठहराव को प्राप्त होता है। यद्यपि प्रबंधो की शैली मुख्यतः चंपू–शैली है,फिर भी गायक गद्य में भी गेयता और ध्वन्यात्मकता उत्पन्न करने में निपुण होते है। वाद्य के रूप में डमरू, ढोलकी, हुडुक और थाल की तालें भी सुनिश्वित होती है। कथा–विकास का और देव के अवतरण के आधार पर लय और ताल द्रुत, मध्य अथवा विलंबित रूप धारण करते हैं। कहीं गीत के शेष बोलों को वाद्‌य ध्वनियो की तालो से पूरा किया जाता है।

यद्यपि इन तालो को विशुद्ध रूप में शास्त्रीय नहीं कहा जा सकता, परन्तु ध्वनि चिह्नो के आधार पर इन्हें लिपिबद्ध किया जा सकता है। प्रबंधो के बीच–बीच में गायक मुक्तक गीतों की लयों का भी प्रयोग करता है। मालूसाही को अनेक शैलियो में गाया जाता है। पूरी मालूसाही मालकौंस के आधार पर भी गाई जा सकती है। घडियाला को मालकौंस तथा दुर्गा रागो के आधार पर भी गाया जा सकता है। लय के

में गंगानाथ की ख्याला में टेक पदों का बहुलता के प्रयोग होता है। इसमें भी 'दुर्गा ' और मालकौस ' रागों की छाया परिलक्षित होती है। ताल के रूप में विलंबित दादरा और द्रुत– दीपचंदी 'तालों का प्रयोग किया जा सकता है।' भडा' और 'पवाडों' में भी विविध प्रसंगों और वर्णनो के अवसर पर यथानुकूल ऊपर वर्णित रागों और तालों का आधार ग्रहण किया जा सकता है। गाथा गीतों के स्वर भी प्रायः आडव जाति के रागों के और दादरा, कहरवा आदि तालों का आदि तालों के निकट है। ताल की दृष्टि से इनमें निबद्ध और अनिबद्ध दोनों रूप मिलते है। कुछ गाथा–गीतो में राग व ताल निम्न रूप में हो सकते हैं :

(1) **जागर :** (प) राग –शिवरंजनी, ताल–कहरवा

1. स्थायी: कैलासू मॉ रैंद ओ भंगल्याऊ जोगी ये................
भगति बणाद जैकी ओ पारू जोगण मेरी अम्बा.............
सहायक चरण: गल माँ च जैकी ओ सरपु की माला ये ....
जटा बीच जैकी ओ दूध गंगा ककी धारा मेरी अम्बा.................

2. राग : मध्यमादसारंग,ताल दादरा
मानिकी भूमि हो हीणा हरैई।
हीणा हो पारि हो फीणा हरैई।
फीणा हो पारि हो तीणा हरैई।
फीणा हो पारि हो तीणा हरैई।

(2) **सैद्वाली राग :** वृंदावनी सारंग, ताल–कहरवा
सल्लाम वाले कुम सल्लाम वाले कुम
त्यारा वे गौड गाजिना सल्लाम वाले कुम
म्यारा मियॉ रतनगाजी सल्लाम वाले कुम
तेरी वो बीबी फातिमा सल्लाम वाले कुम

(3) **मालूसाही :** राग– भूपाली, ताल– दादरा
चैत की कैरूवा कसी, पूसै की पालडा कसी,
राजूला सौक्याणा राजूला सौक्याणा।
तेरी सरता देखी मरोड़ी सरितहॅमछिमा

2. राग– दुर्गा , ताल– दादरा (अति द्रुत लय)
अहा लाल बुरूंसी फूल जसी राजुला।
चैत म्हैणै की ओस जसी राजुला।।

(4) **रमौल** : राग–भूपाली, ताल –कहरवा
द्वी भाई रमौला द्वी भाई रमौला,
रमौली कोटि का द्वी भाई रमौला
सिदुवा बिदूवा द्वी भाई रमौला,
रमौली कोटि का द्वी भाई रमौला SS.......... ।

(5) **चैती** : राग धानी, ताल –तीन ताल (मध्य)
वो दान्यों माँ को दानी राजा बली दानी,
वो दान्यों माँ को दानी को राजा बतैंद।
वो दान्यो माँ को दानी द राजा कर्णदानी।
कश्यप रिशि का हिरणकश्य व्हेन राजा बली दानी।................

(6) **आठूँ: राग** : वृंदावनी सारंग (मंद्र सप्तक), ताल– कहरवा
ल्याओ रे चैलियो काकुडी को फूल,
ल्याओ रे चैलियो माकुडी को फूल ।
फून न थैं तो फानियॉ ल्ही आओ,
फानियॉ न थैं तो पतियॉ ल्ही आओ।...............

(7) **हुडकी बौल** : राग –मालकौस, ताल – दीपचंदी
ए खोली का गणेशा हॉ रे हॉ गणेषा देवा देवा,
सुफल है जाया हॉ रे हॉ गणेषा देवा देवा।
धारै का चमुँवा देवा हो चमुँवा देवा देवा,
सुफल है जाया हॉ रे हॉ चमुँवा देवा देवा।

अतः कहा जा सकता है कि प्रबंधात्मक गीतों में भी संगीत की सरसता विद्यमान है। आवृत्ति–प्रयोगों,

निर्झरणियों, बांसुरी बजाते हुए तरू – मालाओं अनुगुँज देने वाली घाटियों, स्तब्ध नीरव गीत गाते वन –प्रांतरों ने गायक की आत्मा में नैसर्गिक संगीत का संचार किया हैं

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि उत्तराखण्ड के गीतो तथा नृत्यों का अभीष्ठ संबंध है। वाद्यों के सहयोग से गीत और नृत्य उत्तराखण्ड की संगीत–परंपरा को जीवंत किए हुए हैं। कहीं गीत से नृत्य प्रभावित है, कहीं नृत्य के आधार पर गीत योजना हुई है। कुछ नृत्य एसे हैं, जिनमें गीतों की योजना नहीं मिलती,जैसे 'हिलजात्रा आदि।

थार मरूस्थल की विलक्षण जैव विविधता संरक्षण

डी. डी. ओझा
भू जल विभाग, जोधपुर –342003

वस्तुतः पृथ्वी पर मौजूद जीव–जंतुओं तथा वनस्वतियों की लाखों–करोडों प्रजातियों, नदियों, वनों, झीलों, समुद्री क्षेत्र सभी को मिलाकर जैव–विविधता कहा जाता है। जैव विविधता के अन्तर्गत सभी प्रकार की आनुवंशिक सामग्री भी आ जाती है। इस प्रकार की विविधता के अन्तर्गत न केवल जंगली या प्राकृतिक जीव सम्मिलित हैं, अपितु इसमें पालतू पशु तथा उपयोगी फसलें भी सम्मिलित की जा सकती हैं। जैव विविधता की यह विशेषता है कि इसमें केई भी दो जीव जातियां प्रत्येक प्रजाति अपने विशेष ढंग के पर्यावरण के भौतिक (मिटटी, जल, वायु) तथा जैविक अंगो (जंतु तथा वनस्पति) की सहायता से जीवन–यापन करती है।

विश्व में मात्र दो फीसदी हिस्सा जैव–विविधता है और इसमें भी कुल वैश्विक जैव–विविधता का 8 प्रतिशत हिस्सा भारत में हैं। इस दृष्टि से भारत की गिनती प्राकृतिक संपदा वाले दर्जन भर प्रमुख देशों में होती है। भारत देश जैव विविधता की दृष्टि से सर्वाधिक सम्पन्न राष्ट्रों में से एक है। पृथ्वी के पूरे क्षेत्रफल के मात्र 2 प्रतिशत क्षेत्रफल वाले भारत मे समस्त जीवों की लगभग 20 प्रतिशत प्रजातियाँ प्राकृतिक रूप में उपलब्ध हैं। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी पर लगभग एक करोड़ प्रजातियाँ के रूप में जीवन फल–फूल रहा है। इनमें से पंद्रह लाख जीव प्रजातियों को ही अभी तक पहचाना जा चुका है। शेष को, जिनमें अधिकांश सूक्ष्मजीव, विषाणु है, अभी भी पहचाना जाना हैं।

वैज्ञानिकों के अनुसार भारत में 50 हजार पौधो तथा 20 हजार पशुओं की पहचान की गई है। इसके अतिरिक्त 15 हजार पुष्पी पौधे, 5000 प्रकार की समुद्री वनस्पतियाँ,1200 प्रकार के पक्षी तथा 1500 प्रकार की मछलियाँ भी पाई जाती हैं। तथा 20 हजार फफूंद ,16 हजार लाइकेन, 27 हजार ब्रायोफाईटस व 600 टैरिडोफाईटस प्रजातियाँ भी हैं। जैव विविधता की महत्ता इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि चाहे भोजन की आपूर्ति हो या नैसर्गिक दृश्यों का आनंद हो, जैव विविधता का ही यह परिणाम है।

मरूस्थल शब्द का उच्चारण करते ही एक जल रहित, तीव्र झुलसेनवाला, वायु द्वारा निघर्षित तथा दर–दर तक छायाहीन एवं निगाहें उठाकर देखने पर दूर–दूर तक रेत ही रेत दिखलाई पड़ती हैं। इसके

जलवायु की दृष्टि से पृथ्वी पर मरूस्थल ऐसे क्षेत्र होते हैं, जहाँ भू भाग से वर्षण की अपेक्षा अत्यधिक वाष्पन होता है जिसके कारण मृदा अथवा वायु में विद्यमान आर्द्रता किसी भी वनस्पति की वृद्धि में अपर्याप्त रहती है।

अरावली पर्वत श्रृंखला के पश्चिम तथा सिंधु नदी के पूर्व में फैली हुई थार के मरूस्थल को महान, भारतीय मरूस्थल के नाम से जाना जाता हैं। इसमें पंजाब, हरियाणा, गुजरात के कुछ और राजस्थान का अधिक हिस्सा सम्मिलित है। विगत शताब्दी के पचासवें दशक तक थार मरूस्थल एक मिला–जुला प्राकृतवास था, कही बृहद रेतीले टीले थे, तो कहीं लंबे–चौड़े घास के चरागाह। यहाँ मरूस्थलीय वनस्पतियों, यथा कैर झड़बेटी खीपं, फोग आदि का बाहुल्य भी था।

स्वतंत्रता के समय राजस्थान में मात्र 50 लाख लोगो का रहवास था। गाँव व ढाणियाँ छोटी–छोटी थी तथा ग्रामीण वर्ष भर के लिए वर्षा का पानी नदियों में भरकर रखते थे। उस समय पशु–धन की संख्या भी कम थी तथा उनके लिए चारे की कमी भी नहीं थी। आज राजस्थान की जनसंख्या 5 करोड़ 70 लाख हो चुकी है जिस कारण कई समस्याएं उत्पन्न हो चुकी हैं। मरु प्रदेश में लगभग 4000 औषधीय वनस्पतियाँ हुआ करती थी। परंतु वर्तमान में लगभग 1000 ही उपलब्ध हो रही है। मुख्यतः जो औषधीय वनस्पतियाँ लुप्त हो रही है, वे है–सफेद मूसली, वज्रदंती, गोखरन फेफरन, रोहिड़ा, फोग मालकांगनी आदि है। अतः इनका संरक्षण जरूरी है।

थार मरूस्थल में वन्य जीवों का संरक्षण भी बहुत आवश्यक हैं। पूर्व में भारतीय गैजल के भी 200–300 मृगों के झुंड़ यहाँ पाए जाते थे। अद्वितीय सुंदर कृष्ण मृग के बड़े–बडे समुदाय 300–400 मि.मी. वर्षा वाले स्थानो में मिलते थे। वहाँ इन्हें पीने का पानी उपलब्ध होता था। इस मृग के लिए 2–3 दिनों में एक बार पानी पर्याप्त होता है। परंतु आज इनकी संख्या भी अत्यल्प हो रही है। अरावली पर्वत के ढलानों पर चौसिंधे के जोड़े भी पर्याप्त संख्या में मिलते थे। मांसाहारी वर्ग की कैराफल रेंगिस्तानी बिल्ली एवं मरूस्थली लोमड़ी मरू क्षेत्र में बहुतायत में पाई जाती थी। आज लोमड़ियों तथा मरूस्थली बिल्लियों की संख्या बहुत कम हो गई है।

मरूस्थल में विचरने वाले जीव (गोडावन, सैंडग्रउज, लोमड़ी गैजल आदि) स्थानिक वर्ग में आते हैं। स्थाानिक होने के कारण इनका संरक्षण अत्यधिक आवश्यक है। आज ये अत्यल्प संख्या में ही हैं। वन्यजीवों के व्यवसायीकरण का भी इनकी विलुप्तता में बहुत बड़ा योगदान है। मात्र धनोपार्जन के लिए वन्य जीवों की खाल, मांस, दांत, नाखून, हडि्डयों, फर, बल एवं सींग इत्यादि का

रूपांतरित हो गए हैं।

इस 100–150 मि.मी. वर्षा वाले उपखंड में जहाँ वर्ष में मात्र 8–10 दिन मृदा में आर्द्रता रहती थी, वहाँ आज 365 दिन मिट्टी गीली रहती है। जल की अधिकता ने रूक्ष क्षेत्र में अन्य प्रजातियों को भले ही समृद्ध किया है, परंतु स्थानीय जैविकी लुप्त होती जा रही है। पारितंत्र में आए बदलाव के कारण घरेलू चुहिया भी खेतों से निकल आई है। ये कृन्तक प्रजातियाँ जैरबिलों की तुलना में कृषि को बहुत अधिक नुकसान पहुँचाती हैं। साथ ही ये विभिन्न रोगों के वाहक भी हैं। विगत पांच दशकों में वन्य जीवों का आखेट भी सीमा से अधिक बढ़ा है तथा इनके खाल के बढ़े व्यापार के कारण वन्य जीवों की संख्या कम हो रही है। विगत शताब्दी में मरूस्थलीय क्षेत्रों में बब्बर शेर व चीता भी पाया जाता था जो आज विलुप्त हो चुके हैं।

जैव विविधता संरक्षण

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जैव विविधता संरक्षण की नितांत आवश्यकता है। वन्य जीवों की सुरक्षा हेतु हमारी सरकार कृत संकल्प है तथा इस दिशा में "इंडियन वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्शन एक्ट" भी बनाया गया है। विलोप के कगार पर पहुँचने वाली वन्य जीवों की जातियों–प्रजातियों के संरक्षण की व्यवस्था के साथ–साथ इस अधिनियम में वन्य प्राणियों के शिकार को दंडनीय अपराध मानकर पूर्ण प्रतिबंध की घोषणा की गई है। इसके अतिरिक्त भारतीय जीव–जंतु कल्याण बोर्ड, राष्ट्रीय उद्यान एवं वन अभयारण्यों की स्थापना तथा विशिष्ट प्रजातियों के संरक्षण की योजनाएं भी भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही हैं। हमारे देश में विश्व के अन्य देशों की भांति अब तक 13 जैव विविधता मंडल आरक्षण क्षेत्रों का चयन किया गया है। जो निम्नवत् हैं:

जैव मंडल आरक्षण क्षेत्रों की स्थापना हेतु चुने गए क्षेत्र

क्र. सं.	स्थान	राज्य
1	नीलगिरी	तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक
2	नम्दाफा	अरूणाचल प्रदेश
3	नंदा देवी	उत्तराखंड
4	उत्तराखंड (फूलों की घाटी)	उत्तराखंड
5	उत्तरी द्वीप	अंडमान–निकोबार

9	थार मरूभूमि	राजस्थान
10	मानस	असम
11	कान्हा	मध्यप्रदेश
12	नोफरेफ	मेघालय
13	छोटे कच्छ का रन	गुजरात

आज देश में 87 राष्ट्रीय पार्क, 425 वन्य प्राणी विहार एवं 13 जैव विविधता मंडल हैं। इसके अतिरिक्त विदेशी संस्थाओं के सहयोग से भी अनेक कार्यक्रम चल रहे हैं। लुप्त प्राय वनस्पतियों को नये सिरे से चिन्हित करने के लिए ब्रिटिश संस्था बी जी सी आई ने भारत में 6 करोंड़ रुपये की परियोजनाएँ प्रारंभ की हैं।

हमारा भारतवर्ष युगों से अहिंसा परमोधर्म का अनुयायी रहा है तथा हमारी आत्मवत् सर्वभूतेषु मान्यता ही प्रकृति की इस अनुपम वन्य जीव संपदा की रक्षा में सहायक रही है। वन्य जीवो के संरक्षण का सर्वश्रेष्ठ उपाय है उनके प्राकृतिक आवास को सुरक्षित रखना। अतः जीव मंडल आरक्षण क्षेत्रों की स्थापना होने से इस समस्या का निदान हो जाता है। मरूस्थल की विलक्षण जैव विविधता के संरक्षण हेतु जिस असिंचित क्षेत्रों में छोटे–बड़े राष्ट्रीय उद्यान एवं अभयारण्य आदि की स्थापना अवश्य करनी चाहिए जिससे मरूक्षेत्रीय जैव विविधता का संरक्षण हो सके। आज के युग में जब तक पर्यावरण शिक्षा का व्यापक प्रचार–प्रसार नहीं होगा एवं ऐसे जनोपयोगी कार्यों में जन सहभागिता नहीं होगी तब तक आशान्वित लाभ भी नहीं होगा। अतः जैव विविधता के संरक्षण हेतु जन चेतना अवश्य जागृत करनी चाहिए जिससे वनस्पतियों एवं वन्य जीवों का संरक्षण हो सके।

भारतीय स्नोट्राउट में शीतजल अनुकूलनता हेतु कम तापमान में ग्लिसरोल उत्पादन की प्रक्रिया : एक अध्ययन

अशोकतरू बराट, अंकिता त्यागी, चिराग गोयल, आर.एस.पतियाल
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

आर्कटिक मछलियों में एक विशेष प्रकार की प्रणाली होती है जिसके द्वारा एन्टीफ्रिज प्रोटीन एवं ग्लिसरोल पैदा होती है जो कि शीतजल में अत्यधिक शीत से जमने की प्रक्रिया का प्रतिरोध करती हैं। जिससे ये मछलियां अत्यधिक शीतावस्था में भी बर्फ के अन्दर क्रियाशील होकर भोजन ग्रहण करने में संलग्न रहती हैं। यहाँ प्रश्न यह है कि इन मछलियों के अन्दर ऐसी कौन सी प्रणाली/प्रक्रिया होती है जिससे ये अनुकूलनता ग्रहण करती हैं।

ड्रेडजिंक, वेस्ट, स्टीफन एवं रेमण्ड (1998) ने रेनवो स्मेल्ट (*Osmerus mordax*) में ग्लिसरोल के प्रयोग से समुद्रीय जल की अतिशीतय अवस्था से सहन/प्रतिरोध की क्षमता पायी। इन प्रणालियों में पायी जाने वाली ग्लिसरोल के तुलनात्मक अध्ययन पहले से ही उपलब्ध हैं। एडवर्क, रिचर्ड एवं डेरियोरिजक (2001) ने बताया कि इसकी सटीक जानकारी नहीं है कि ग्लिसरोल की अधिकतम स्तर अतिशीत अवस्था में अनुकूलनता के लिये उत्तरदायी है परन्तु यह सुनिश्चित है कि जीवित रहने हेतु स्मेल्ट फिश अवश्य ही फ्रिजिंग विन्दु प्राप्त करता है। रेमण्ड एट.अल. (1996) ने पाया कि अतिशीत मौसम में सर्फ स्मेल्ट (*Hypomesus periostious*) में कम तापक्रम ग्लिसरोल का एक्यूमूलेशन करता है।

ईवार्ट, रिचई एवं डेरिओनिक (2001) ने अटलांटिक सालमन तथा रेनबो स्मेल्ट (*Osmerus mordax*) में GPDH को प्रस्तुत करने वाला Sequance का अध्ययन किया। इन्होनें RT-PCR का प्रयोग कर दोनों मछलियों के विभिन्न ऊतको (टिश्यू) से GPDH mRNA प्राप्त किया। सालमन तथा स्मेल्ट में 88% अमीनो एसिड सिक्वैन्श एक दूसरे से समान पाये गये और वफर फिश (*Takifugu rubriceps*) के GPDH से 83 से 84% समानता पायी गयी। परन्तु फलेचर एट. अल. 1988 के अनुसार अटलांटिक सालमन में शीत प्रतिरोधक अनुकूलनता नहीं पायी गयी। इस प्रक्रिया को कन्ट्रोल अवस्था माना गया क्योंकि स्मेल्ट तथा सालमन वायलोजिकली समान प्रजाति है।

उपापचन तंत्र की समीक्षा की। कार्बन के प्रवाह के साथ DHAP से मछली के रक्त में ग्लिसरोल का स्तर बढ़ रहा हैं। ग्लिसरोल को उतपादित करने में ग्लुकोज एक महत्वपूर्ण कार्बन स्रोत है और बाद में प्रोटीन एवं अन्य रसायन भी प्रयोग होते हैं। इन्होंने पाया कि कम तापमान से अधिक ग्लिसरोल उत्पादित हो रहा है और साथ में ग्लिसरोल की क्रिया भी इससे जुड़ी हुई है।

अजमनीय प्रोटीन और ग्लिसरोल उत्पादन के अलावा रेनबो स्मेल्ट में यूरिया और ट्राईमैथाईलिन आक्साइड भी रक्त में बन रहा है (जमनीय बिन्दु से नीचे)। ड्रेडजिक और साहे ने 2007 में स्मेल्ट को 5^0C से 1^0C में 19 दिन के लिये रखा गया और स्पष्ट किया कि शर्द ऋतु में ग्लिसरोल बन रहा है जो अजमनीय की तरह प्रयोग होता है।

हमने भारतीय स्नोट्राउट में अध्ययन के दौरान यह पाया कि प्रतिकूल तापमान 5^0 में ग्लिसरोल का स्तर अधिक पाया गया है। इस बात की पुष्टि पहले भी की जा चुकी है और साथ में GPDH mRNA का स्तर भी इसके विपरित पाया गया है जो कि शीत स्थिति में बढ़ रहा है। हमने उसका अनुवांशिकी में क्या प्रतिक्रिया है जानने के लिये mRNA से उपलब्ध cDNA में GPDH का PCR करके GPDH जीन को प्राप्त किया। जिसकी पुष्टि पहली बार हमारे द्वारा शीतजल की मछली में की गई है।

पर्यावरण में हो रहे तापमान परिवर्तन का निरन्तर प्रभाव जलीय जन्तु खासकर मछली में देखने को मिला है। इस GPDH जीन का भविष्य में हस्तान्त्रण के माध्यम से हम आने वाले समय में मछली की प्रजाति को विलुप्त होने से बचा सकते हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में मछली पालन एक लाभकारी व्यवसाय

प्रेम कुमार, एस. अली एवं आर.एस. पतियाल
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

बालक हो या वृद्ध मछली का नाम सुनकर सभी के मुंह में पानी आ जाता है। मछली आसानी से पचने वाला प्रोटीन युकत भोज्य पदार्थ है। यदि ताजा मछली खाने को मिल जाए तो यह शरीर के लिए टॉनिक का काम करती है। पर्वतीय क्षेत्रों के किसान भाई बड़ी आसानी से कम लागत लगाकर मछली उत्पादन कर सकते हैं साथ ही उत्पादित मछलियों को अपने परिवार में उपयोग करने के पश्चात इन्हे बेचकर अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में संसाधनों की कमी है तथा ऐसी परिस्थितियों में मछली पालन एक लाभकारी व्यवसाय है।

मछली पालन की सफलता के लिए एक अच्छे तालाब की आवश्यकता होती है। किसान अभी भी परम्परागत रूप से कच्चे तालाबों या सीमेंट से बने पक्के तालाबों में मछली पालन कर रहे हैं लेकिन कच्चे तालाबों में पानी का लगातार रिसाव होता रहता है। अतः तालाब में आवश्यक जल स्तर रखने के लिऐ लगातार पानी भरने की आवश्यकता होती रहती है। यदि ऐसा न किया जाए तो पानी की कमी के कारण मछलियां मरने लगती हैं। पक्के तालाबों में मछली पालन करने से मछलियों की बढ़वार संतोषजनक नहीं हो पाती है तथा तालाब बनाने में किसान को काफी धन खर्च करना होता है। यदि कच्चे तालाबों में पॉलिथीन बिछाकर पानी भरा जाए तो ऐसे तालाब में बार बार पानी भरने की आवश्यकता नहीं रहती तथा उपलब्धता के आधार पर पानी भरा जा सकता है। ऐसे तालाबों को पौलिटैंक कहते हैं। वैज्ञानिक स्तर पर सिद्ध हो चुका है कि पालीटैंक में मछली पालन अति सुलभ है तथा उत्पादन का स्तर कच्चे या पक्के तालाबों की तुलना में काफी ज्यादा है। पौलीटैंक में भरे पानी की गुणवत्ता स्थिर रहती है तथा जल का तापक्रम अन्य तालाबों की अपेक्षा अधिक रहता है। यह स्थिति मछली पालन के लिए लाभकारी रहती है तथा मछली कम समय में ही तेजी से बढ़कर बेचने या खाने योग्य हो जाती है।

ऐसे तालाब बनाने के लिए 100–200 वर्ग मी. की समतल जमीन का चुनाव करना चाहिए। जहाँ तक हो सकता है आयताकार तालाब का निर्माण करना श्रेयस्कर रहता है। जिसकी गहराई 1.5 मी. रखी जा सकती है तथा 1.2 मी. तक पानी भरा जा सकता है। तालाब के बन्ध ढालदार बनाने चाहिए। ऐसा करने से

हुआ पानी सब्जी के पौधों की वृद्धि के लिए उत्तम रहता है। क्योंकि इसमें प्रचुर मात्र में पोषक तत्व घुले रहते हैं तथा पौधों को नाइट्रोजन प्रचुर मात्रा में मिलती है।

तालाब का निर्माण होने जाने के बाद तालाब को मछली उत्पादन के लिए तैयार करते हैं। सबसे पहले 100 वर्ग के तालाब में तीन चार इंच मोटी मिटटी की सतह बिछा ली जाती है जिससे कि मछली के लिए प्राकृतिक वातावरण रहता है। तथा पानी में लगातार मछली का प्राकृतिक भोजन जलीय प्लवक पैदा होते रहते हैं। ऐसा करने से पालीथीन भी लम्बे समय तक सुरक्षित रहती है। 100 वर्गमीटर के पौली टैंक में 20–25 किग्रा. कच्चा गोबर डालते हैं तथा साथ ही 2–2.5 किग्रा. चूने का प्रयोग करते हैं। कच्चा गोबर डालकर लगभग एक फिट पानी भर दिया जाता है। 3–4 दिन के उपरांत चूने की मात्रा को पानी में घोलकर तालाब में छिड़क देते हैं। इसके बाद तालाब का जल स्तर 4 फिट तक कर देते हैं।

इसके लगभग 2 सप्ताह बाद जब पानी में ठहराव आ जाता है तथा पानी का रंग हल्का हरा दिखने लगता है तब मछली के बीज का संचय करते हैं।

तीन प्रजातियों की मछली को एक तालाब में साथ साथ पाला जाता है। ये मछली मछलियां– सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प व कामन कार्प हैं। ये तालाब में पानी के अलग अलग स्तर में रहती हैं। संचय करने के लिए तीन–चार इंच की अंगुलिकाओं को आक्सीजन एवं पानी से भरी पालीथीन में पैक करके तालाब तक लाया जाता है। आघा नाली के तालाब में कुल 250–300 अंगुलिकाओं का संचय किया जाता है। इससे पूर्व बीच की संख्या का तीस प्रतिशत सिल्वर कार्प, 40 प्रतिशत ग्रास कार्प तथा शेष 30 प्रतिशत कामन कार्प का संचय करत हैं। 100 वर्गमीटर के तालाब में 75 अंगुलिकाऐं सिल्वर कार्प, 100 अंगुलिकाऐ ग्रास कार्प व 75 अंगुलिकाऐं कामन कार्प का संचय कर सकते हैं। आवश्यकता से अधिक संचय करने पर मछलियां अचानक मर सकती हैं तथा उनकी बढ़वार नहीं हो पाती। मछली का यह बीज किसान भाई अपनी आवश्यकता बतलाकर मत्स्य पालन विभाग या सीधे पंतनगर की मत्स्य हैचरी या अन्य प्रतिष्ठित हैचरी से सीधे भी ला सकते हैं।

मछलियों की बढ़वार के लिए प्रतिमाह तालाब में 20–22 किग्रा. कच्चा गोबर, तथा 2–3 किग्रा. चूना डालते रहना चाहिए। लेकिन तालाब के पानी में अत्यधिक हरे रंग की शैवाल हो गयी है तो इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए। अच्छा उत्पादन लेने के लिए मछलियों को समपूरक आहार प्रतिदिन देना आवश्यक है। इसके लिए किसान भाई सरसों की खली तथा चावल की भूसी या पालिस को बराबर मात्रा में मिलाकर

बजन से की जाती है। मछलियों के कुल वजन का 2–3 प्रतिशत प्रतिदिन आहार दिया जाता है। मोटे तौर पर कह सकते हैं 100 वर्गमीटर तालाब में प्रथम माह 100 ग्राम आहार प्रतिदिन देते हैं तथा प्रत्येक माह 100 ग्राम आहार बढ़ाते हैं और अंत में बारहवें माह में 1200 ग्राम आहार देते हैं। यदि मछलियां आहार कम खा रही है तथा खाने को छोड़ देती है तो तब खुराक को कम कर देते हैं। आहार देने से 20 मिनट पहले ग्रास कार्प को नरम पत्ते वाली ताजा घास खाने को देते हैं। इसके लिए घास को काटकर पानी की सतह पर फेला देते है। ग्रास कार्प एक दिन में अपने वजन के बराबर हरी घास खा लेती है। यदि सम्पूरक आहार तथा हरा चारा साथ साथ देते हैं तो ग्रास कार्प चारा न खाकर आहार खा लेती है। इससे दूसरे प्रजातियों की मछलियों को कम मात्रा में ही आहार मिल पाता है।

किसान भाईयों को चाहिए कि प्रत्येक माह जाल चलाकर मछलियों के स्वास्थ्य बढ़वार की जांच करवाने से मछलियों का व्यायाम भी हो जाता है जिससे वे अधिक मात्र में आहार ग्रहण करती हैं।

यदि तालाब का पानी अधिक गंदा हो गया हो तो तब ताजा पानी भरने की कोशिश करनी चाहिऐ। अन्यथा पानी को शुद्ध करने के लिए तथा मछलियों के बीमार होने की संदेहात्मक स्थिति लाल दवा पोटेशियम परमैंगनेट की एक चम्मच मात्रा अच्छी तरह एक बाल्टी पानी में घोलकर आधा नाली के तालाब में छिड़क देना चाहिऐ। कभी कभी तालाब के पानी में घुलित आक्सीजन की कमी हो जाने के कारण मछलियाँ मुँह घोलकर पानी की सतह में एकत्र हो जाती है। ऐसी स्थिति में तालाब में ताजा पानी डालते है अथवा तालाब के अंदर घुसकर पानी को हिला–डुलाकर आक्सीजन का स्तर बढ़ाते हैं।

इस प्रकार एक वर्ष में लगभग 500–600 ग्राम की मछलियाँ हो जाती हैं। आधा नाली के तालाब से 70–80 किग्रा. मछलियां बेचकर लगभग 6000रु. आय सालाना प्राप्त की जा सकती है।

अतः पर्वतीय क्षेत्रों में मछली पालन की सफलता के लिए आवश्यक है कि मछली पालन पौली–टेंक में किया जाए। बीज का संचय 250–300 प्रति 100 वर्गमीटर किया जाऐ। प्रत्येक माह गोबर तथा चूने का प्रयोग किया जाऐ और प्रतिदिन मछलियों को सम्पूरक आहार दिया जाऐ। ऐसा करने से हमारे किसान भाई सफल मत्स्य पालक बन सकते हैं।

मध्य हिमालय में पादप जननद्रव्य गतिविधियों से आशाएँ, अपेक्षाएँ एवं क्षरण रोकने के उपाय

कुलदीप सिंह नेगी, कमलेश चन्द्र मुनीम, ए.के.त्रिवेदी एवं पी.एस. मेहता
राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केन्द्र, भवाली (नैनीताल)

पिछले तीन दशकों से कृषि वैज्ञानिक महसूस कर रहे हैं कि वर्तमान में उपयोग में आ रही अनेक परम्परागत खाद्य प्रदान करने वाली पादप प्रजातियां एवं उनकी किस्मों का भविष्य में कम उपयोग में आने तथा उनके स्थान पर विकसित किस्मों को लगाने से पादप जननद्रव्यों का क्षरण सम्भावित है। हिमालयी वनस्पति का जिस तीव्र गति से इस समय विनाश हो रहा है वह आने वाले वर्षों में विश्व की ऐतिहासिक दुर्घटना साबित होगी। भावी पीढ़ी हमारे सामने यह अहम सवाल अर्थात् यक्ष प्रश्न उठाएगी कि अनेक दुर्लभ उपयोगी पौधों को हमने उगाने व बढ़ाने की जगह, जिन्दा क्यों दफना दिया? विगत कुछ वर्षों में वैज्ञानिक समुदाय का ध्यान इस समस्या की ओर आकृष्ट हुआ है। संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन ने अर्न्तराष्ट्रीय पादप जीन कोष का गठन किया है। पादप आनुवंशिक संसाधनों का संरक्षण कई प्रकार से किया जा सकता है। जैसे बीजों को उगाकर, जीन बैंक स्थापित करके, भ्रूण संवर्द्धन द्वारा अनुकूल स्थान पर उन्हे प्राकृतिक अवस्था में उगाकर, सुखाऐ हुए बीजों को कम तापमान पर 50–100 वर्षों तक की लम्बी अवधी (बेस संग्रह) तथा 10–20 वर्ष तक की लघु अवधि (ऐक्वेटिक संग्रह) के लिए भंडारित करके बहुवर्षीय पौधों को जीन रिजर्व के रूप में प्राकृतिक दशाओं के अर्न्तगत उन स्थानों पर उगाकर संरक्षित किया जा सकता है जहां वे बहुतायत से पाऐ जाते हैं। भारत में राष्ट्रीय पादप अनुसंधान ब्यूरो ने इस कार्य के लिए जलवायु की विभिन्नता के आधार पर 10 क्षेत्रीय केन्द्र स्थापित किऐ हैं। ये केन्द्र हैं– अकोला (महाराष्ट्र) कटक (उड़ीसा) जोधपुर (राजस्थान) रांची (झारखण्ड) उमीमाम, शिलांग (मेघालय) फागली, शिमला (हिमाचल प्रदेश) त्रिचूर (केरल) हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश) रावलपुरा, श्रीनगर (जम्मू एवं कश्मीर) तथा भवाली, नैनीताल (उत्तराखण्ड)। मध्य हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उत्तराखण्ड राज्य में जिला नैनीताल के भवाली के पास निगलाट में वर्ष 1986 में क्षेत्रीय केन्द्र स्थापित किया गया है। इसके अर्न्तगत स्थानीय पादप विविधता के संग्रह, विदेशों से किस्में का आयात, संग्रहों की विभिन्न परिस्थितियों और उपकेन्द्रों में जांच, उनके गुणों का लेखा–जोखा तैयार कर कैटलाग बनाकर तथा वैज्ञानिक समुदाय में मांग के अनुसार इनका बीज तैयार और वितरित करना जैसे कार्य किये जाते हैं। इसमें फसलों तथा अन्य

संगठन पादप जनन द्रव्य सामग्री तथा पारम्परिक बीजो को बचाने में प्रयासरत है।

मध्य हिमालय तथा आस पास के पर्वतीय क्षेत्रों में ब्यूरो के निगलाट, भवाली केन्द्र, जिला नैनीताल, उत्तराखण्ड द्वारा वर्ष 1985 से अब तक (2007) 142 अन्वेषण एवं संग्रहण हेतु दौरा कर लगभग 15792 स्थानीय किस्में सुदूर पर्वतीय क्षेत्रों से संग्रहित की गई है, जिनमें से प्रमुख क्षेत्र है जिला चमोली के रूप कुण्ड (5000मी.) फूलों की घाटी 3000–4500 मी. नैनीताल व पौड़ी जिलों के थारू एवं बुक्सा जनजाति बहुल क्षेत्र (100–300 मी.) जिला उत्तरकाशी के हर–की–दून, चानसिल धार 4000 मी. पिथौरागढ़ जिले के गर्ब्यांग (4500 मी.) जिला बागेश्वर के सुंदरढुंगा, काफनी एवं पिण्डारी ग्लेशियर (4500 मी.) प्रमुख दूर दराज व कम जाने पहचाने क्षेत्र हैं।

कुछ समय पूर्व तक मध्य हिमालय क्षेत्र में कृषि के उपयोग में आने वाले पौधों में व्यापक विविधता पायी जाती थी। फलस्वरूप स्थानीय किस्में लम्बें समय से खेतों में बनी हुयी थी और प्रतिकूल परिस्थितियों का सफलतापूर्वक सामना कर रही थी परन्तु नई किस्मों को विकसित करने की अंधी होड़ में हमने इस ओर ध्यान देना बंद कर दिया, फलस्वरूप उन स्थानीय किस्मों की समाप्ति होने लगी जो वर्षों से पर्वतीय क्षेत्रों में प्राकृतिक आपदाओं से संघर्ष कर लोगों का जीवन निर्वाह करा रही थी। नयी किस्में चूंकि संकीर्ण आनुवंशिक आधार वाली होती है, अतः वे प्रतिकूल दशाओं के सामने शीघ्र धराशाही हो जाती हैं। राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, निगलाट द्वारा स्थानीय किस्मों का नाम, आकार, रंग रूप आदि गुणों के आधार पर पहचान करके उन्हे जमा किया जा रहा है। विभिन्न स्थानीय किस्मों की विभिन्नता जिन बातों पर निर्भर करती है वह है, बुआई का समय, पकने का समय, पौधों की ऊँचाई, कृषि जलवायु परिस्थिति, अलग अलग प्रकार की मिटटी में उगने की क्षमता, भूमि की स्थालाकृति तथा मिटटी की संरचना और जल धारण की क्षमता आदि। ये स्थानीय किस्में उपज व पकने में विकसित किस्मों से हल्की होती है। इनके पौधे भी अधिकतर लम्बे व अधिक जगह घेरते हैं। फिर इनके संग्रह की आवश्कता क्यों? स्थानीय किस्में सदियों से वातावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद, इतने लम्बे अर्से तक बनी हुयी है तथा इनमें प्रतिरोधी क्षमता भी उत्पन्न हो गयी है। दूसरी ओर विकसित किस्मों में यद्यपि उपज कई गुना अधिक होती है, वे जल्दी पकती है, कुछ बीमारियों के लिए उनमें प्रतिरोधी गुणों का समावेश भी किया जाता है तथापि उनकी अपनी सीमा है। वातावरण के अनुकूल ना होने पर भी बीमारियों की नई उपजातियां पैदा हो जाने पर कभी कभी ये किस्में महामारी रोगों के समान समाप्त हो जाती है। इनमें सूखा सहन करने की क्षमता भी नहीं

आंकड़ों को देखा जाऐ तो इस अवैज्ञानिकता का स्वतः निराकरण हो जाएगा। दो दशाब्दियों के अर्न्तगत ही यह सब हो चुका होता परन्तु विचारवान वैज्ञानिकों द्वारा खाद्यान्नों की नई किस्मों व रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से आज भारत अनाज के मामले में आत्मनिर्भर है।

मध्य हिमालय के सुदूर, दूर–दराज पर्वतीय क्षेत्रों के किसानों एवं उनकी महत्वपूर्ण स्थानीय किस्मों के सर्वेक्षणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि विकास के अनाज (सुधरी किस्में) हर वर्ष सफलतापूर्वक नहीं चल पाते। इनमें अधिक वर्षा एवं कम वर्षा से समस्याऐं उत्पन्न होती हैं। आड़े समय मे हमें भुखमरी से बचाने के लिए मंडुवा एवं मदिरा व अन्य मोटे अनाज ही काम आते हैं।

मत्स्यसंवर्धन द्वारा जीविकोपार्जन

एस. अली एवं प्रेम कुमार
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

कृषि की तरह मत्स्यपालन भी एक लाभकारी व्यवसाय के रूप में प्रचलित हो रहा है। मछली केवल प्रोटीन युक्त उत्तम आहार ही नहीं, बल्कि यह कम लागत पर अच्छी आमदनी का उत्तम साधन भी है। पर्वतीय क्षेत्रों में सिमित संसाधन हैं, इन संसाधनों के बहुद्देशीय उपयोग से ही जीविकोपार्जन संभव है। जहाँ–जहाँ पानी के स्रोत उपलब्ध हैं, उन स्थानों में सफलता पूर्वक मछलीपालन किया जा सकता है। मछलीपालन के लिये मुख्य रूप से एक तालाब की आवश्यता होती है। पर्वतीय क्षेत्र में आधी नाली या एक नाली, जो की लगभग 100 वर्ग मी. या 200 वर्ग मी. क्षेत्रफल होता है, इस क्षेत्रफल के मछली के तालाब बनाए जा सकते हैं। तालाब का आकार लगभग आयताकार होना चाहिए। ये तालाब कच्चे भी हो सकते हैं या फिर तालाब में पॉलिथीन भी बिछाई जा सकती है। पॉलिथीन बिछाने से तालाब के पानी का रिसाव नहीं होता है तथा भरे हुए पानी को बहुत समय तक रोक कर रखा जा सकता है। साथ ही पॉलिथीन लगे तालाबों में मछली की बढ़वार भी अधिक होती है। इन तालाबों की गहराई लगभग 1.5 मीटर रखते हैं। पॉलिथीन के ऊपर 3–4 इंच मोटी मिट्टी की परत् बिछाई जाती है। जिससे तालाब में मछली के लिये प्राकृतिक वातावरण बना रहता है तथा यह मछलियों के प्राकृतिक भोजना के उत्पादन में भी सहायक होता है। तालाब में लगभग आधी गहराई तक पानी भर दिया जाता है। तालाब में एक सिरे से पानी भरने तथा दूसरे सिरे से पानी निकालने की व्यवस्था करना आवश्यक है। ऐसा करने से तालाब में एकत्र हुए अतिरिक्त जल का उपयोग आवश्यकता पड़ने पर अपने सब्जी उत्पादन के लिये खेतों में भी कर सकते हैं। तालाब का ठहरा हुआ पानी सब्जी के पौधों की वृद्धि के लिये उत्तम रहता है। क्योंकि इसमें प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व घुले रहते हैं जिससे पौधों को नाइट्रोजन मिलती है।

आधी नाली के तालाब में लगभग 2–2.5 किलोग्राम चूना पानी में घोलकर तालाब में छिड़क देते हैं। इसके 3–4 दिनों के बाद लगभग 20–25 किलोग्राम कच्चा गोबर पानी में घोलकर तालाब में डाल देते हैं। चूना एवं गोबर के व्यवहार के लगभग एक सप्ताह के बाद तालाब के पानी का रंग हल्का हरा हो जाता है। यह इस बात का संकेत है कि तालाब के पानी में मछलियों का प्राकृतिक आहार जिसे वैज्ञानिक भाषा में प्लवक कहते हैं, प्रचुर मात्रा में पैदा हो चुके हैं। अब यह तालाब मछली बीज डालने के लिये पूरी तरह

तालाब में पाल सकते हैं। इनमें सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प एवं कामन कार्प प्रजाति की मछलियाँ उपयुक्त हैं। इन प्रजातियों के बीज किसी भी मत्स्य बीज उत्पादन केंन्द्र अथवा हैचरी या मत्स्य विभाग से आसानी से मिल जाता है। मछली के बीज को पॉलिथिन के थैले में भर कर लाया जाता है। इन थैलों में एक तिहाई पानी तथा शेष दो तिहाई ऑक्सीजन भरी जाती है। इन थैलों को गत्ते के डब्बे में रखा जाता है। इस तरह मछली के बच्चे सुरक्षित तालाबों तक लाये जाते हैं। 100 वर्ग मीटर के तालाब में 250–300 मछली के बच्चे छोड़े जाते हैं। इनमें कुल बीज की संख्या का 30 प्रतिशत सिल्वर कार्प 40 प्रतिशत ग्रास कार्प तथा शेष 30 प्रतिशत कॉमन कार्प संचय करते हैं। तालाब तक पहुँचने के बाद मत्स्य बीज थैलियों को 20 मिनट तक तालाब के पानी में रखते हैं। ऐसा करने से थैली के अन्दर का तापमान तालाब के तापमान के समान हो जाता है। इसके बाद थैली को खोलकर तालाब का लगभग एक लीटर पानी थैली में डाल दिया जाता है और 5 मिनट के बाद मछली के बच्चों को धीरे–धीरे तालाब में छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार सावधानी से मछली के बच्चे संचय करने से किसी भी प्रकार की हानि नहीं होती है अन्यथा संचय के समय मछली के बच्चों कि मृत्यु भी हो सकती है।

मछली का बीज तालाब में डालने के बाद प्रतिदिन मछलियों को आहार देना होता है तथा देखरेख करनी होती है। आहार बनाने के लिये चावल की भूसी या पालिश तथा सरसों की खली की आधी–आधी मात्र मिला लेते हैं तथा प्रथम माह 100 वर्ग मीटर के तालाब में 100 ग्राम आहार प्रतिदिन देते हैं और प्रत्येक माह 100 ग्राम आहार बढ़ाते जाते हैं। इस प्रकार 12 वे माह में एक किलो 200 ग्राम आहार प्रतिदिन देते हैं। आहार प्रातःकाल के समय दिया जाना चाहिए तथा आहार देने से एक घन्टे पहले खुराक को पानी में भिगो देते हैं। इसके बाद आहार को लड्डू बनाकर किसी प्लास्टिक की थैली में रखकर तालाब में निश्चित स्थान पर लटका दें। इन प्लास्टिक की थैलियों में 10–12 उंगली की मोटाई के छेद बना दें। दिन भर में मछलियां आहार खा लेती हैं तथा अगले दिन खाली थैले को निकालकर साफ कर पुनः आहार भरा जा सकता है। ऐसा करने से आहार व्यर्थ नहीं होता एवं तालाब भी साफ रहता है। इस आहार के अलावा ग्रास कार्प मछली के लिये ताजा घास या सब्जियों के बेकार हरे पत्ते को बारीक काट कर भी खिलाया जा सकता है। यह तैरता हुआ हरा चारा ग्रास कार्प पानी की सतह पर आकर बड़े चाव से खाती है।

इस प्रकार एक वर्ष में आधी नाली के तालाब से लगभग 600 से 800 ग्राम तक की 70 से 80 किग्रा. मछलियों का उत्पादन किया जा सकता है। तथा बाजार में इन्हें 120 से 150 रु. प्रति किग्रा. की दर से बेच कर लगभग 4000 से 5000 की नगद आमदनी प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त किसान भाई अपने

इस प्रकार पर्वतीय क्षेत्र में खेती बाड़ी के साथ मछलीपालन कर के दोहरी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। मछलीपालन के साथ–साथ मुर्गीपालन, बत्तखपालन एवं सब्जी उत्पादन कर किसान भाई सफलता पूर्वक जीवनयापन कर सकते हैं। इस प्रकार मत्स्यसंवर्धन एक लाभकारी व्यवसाय के रूप में किसान भाईयों के जीविकोपार्जन के लिये एक प्रमुख साधन बन सकता है।

भीमताल झील में सुनहरी महाशीर का पालन–पोषण : एक आख्या

देबाजीत शर्मा
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

भीमताल मे स्थापित शीतजल मात्यिकी अनुसंधान निदेशालय भारत में शीतजल मत्स्य पालन तथा तदसम्बन्धी अनुसंधान एंव विकास कार्यक्रमों के बढ़ावा देने के लिए एक अग्रणी संस्थान है। यह निदेशालय पर्वतीय मात्स्यिकी संसाधनों के सतत् उपयोग हेतु पाँच विभिन्न पर्वतीय राज्यों नामतः अरूणाचल प्रदेश, सिक्किम, जम्मू एंव कश्मीर, उत्तराखण्ड़, एंव हिमाचल प्रदेश तथा राज्य मत्स्य विभाग व विश्वविद्यालयों /संस्थानों के साथ मिलकर कार्य कर रहा है।

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय ने सुनहरी महाशीर मे प्रजनन एवं पालन–पोषण की तकनीकी का मानकीकरण करने के साथ–साथ भीमताल स्थित महाशीर हैचरी में व्यापक पैमाने पर सुनहरी महाशीर के बीजों का उत्पादन किया है। इस महाशीर हैचरी में उत्पादित बीजों को नियमित रूप से राज्य मत्स्य विभाग, प. बंगाल सरकार, राज्य मत्स्य विभाग, सिक्किम, राजस्थान सरकार तथा महाशीर पुर्नसंस्थापन कार्यक्रम में लगे विभिन्न गैर सरकारी संगठनों को भी उपलब्ध कराए। इस निदेशालय का महत्वपूर्ण उद्देश्य सुनहरी महाशीर को उत्तराखण्ड में स्थित प्राकृतिक आवासों जैसे– नदियों, धाराओं, झीलों सहित अन्य दूसरें पर्वतीय राज्य के जल स्रोतों के आवास स्थलों को संरक्षित करना है। इस को ध्यान में रखते हुए यह निदेशालय उत्तराखण्ड की विभिन्न नदियों व झीलों में महाशीर के बीजों का पालन हेतु प्रतिवर्ष संरक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। हाल ही में झीलों में सुनहरी महाशीर के 50,000, जीरा संचयित किऐ गऐ। निदेशालय के निदेशक डा. पी. सी. महंता ने उत्तराखण्ड की नदियों/झीलों धाराओं में महाशीर के संरक्षण के लिए कुछ कठोर कदम उठाऐं है। डा. पी.सी. महंता के अनुसार इस मत्स्य प्रजाति का संरक्षण अनेक प्राकृतिक एंव मानवीय गतिविधियों के कारण आज संकटग्रस्त हो रही है।

संरक्षण कार्यक्रम के अवसर पर विभिन्न वैज्ञानिक एंव गणमान्य डा. ए. के. उपाध्याय, भूतपूर्व सचिव, भा.अनु. परि. नई दिल्ली, डा. वी. वी. सुगनन, सहायक निदेशक (मत्स्य) भा. अनु. परि. नई दिल्ली, डा. आर. एस. चौहान, भूतपूर्व निदेशक, राज्य मत्स्य विभाग, उत्तराखण्ड, डा. कृष्ण गोपाल, प्रधान जीव विज्ञान, आई. आई. टीर. आर. लखनऊ, डा. मदन मोहन, सहायक उप महानिदेशक (समुद्री मात्स्की) भा.अनु. परि. नई दिल्ली एंव डा. सर्वेश कुमार, भूतपूर्व विभागाघ्यक्ष, जन्तुविज्ञान विभाग, कुमायँ विश्वविद्यालय नैनीताल

देवभूमि उत्तराखण्ड : एक सामान्य जानकारी

अमित कुमार जोशी
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

स्कन्द पुराण में हिमालय को पांच भौगोलिक क्षेत्रों में विभक्त किया गया है–

पंच खण्डाः हिमालयस्य कथिताः नैपालकूर्माचंलौ।

केदारोस्थ जालन्धरोस्थ रुचिर काश्मीर संज्ञोस्तिमः।।

अर्थात हिमालय नेपाल, कुर्मांचल (कुमायूं), केदारखण्ड (गढ़वाल), जालन्धर (हिमाचल प्रदेश) और सुरम्य कश्मीर पांच खण्डों से मिलकर बना माना जाता हैं।

पौराणिक ग्रन्थों में कुर्मांचल क्षेत्र मानसखण्ड के नाम से प्रसिद्ध था। पौराणिक ग्रन्थों में उत्तरी हिमालय में यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध जातियों की सृष्टि और इस सृष्टि का राजा कुबेर बताया गया है। कुबेर की राजधानी अलकापुरी (बद्रीनाथ के उपर) माणा के पास बतायी जाती है। पुराणों के अनुसार राजा कुबेर के राज्य में आश्रम में ऋषि–मुनि तप व साधना करते थे। अंग्रेज इतिहासकारों के अनुसार हूण, शक, नाग, खश आदि जातियां भी हिमालय क्षेत्र में निवास करती थीं। पौराणिक ग्रन्थों में केदार खण्ड व मानस खण्ड के नाम से इस क्षेत्र का व्यापक उल्लेख है। इस क्षेत्र को देव–भूमि व तपोभूमि माना गया है।

उत्तराखण्ड अनादि काल से भारतीय दार्शनिक चिन्तन, अध्यात्मिक साधना ओर धर्म, इतिहास तथा संस्कृति का केन्द्रस्थल रहा है। प्राचीन साहित्य में तीर्थयात्रा से सम्बन्धित अनेक विवरण इस भू–भूभाग को स्वर्ग की संज्ञा देते हैं। अतः युग–युगान्तर से ही ऋषियों, मुनियों, वानप्रस्थियों तथा चिन्तकों के लिए यह क्षेत्र जीवन श्रोत तथा प्रेरणा का केन्द्र बना रहा।

भौगोलिक संदर्भ में उत्तराखण्ड 28^0 43′–31 उत्तर से 31^0 27′ उत्तर और रेखांश 77^0 34′ पूर्व से 81 02′ पूरब के बीच में 53,483 वर्ग किमी है, जिसमें से 43,035 वर्ग किमी. पर्वतीय है तथा 7,448 वर्ग किमी मैदानी है एवं 34651 वर्ग किमी भूभाग वनाच्छादित है। देशांतरीय विस्तार में प्रशासनिक भू–भूभाग ही नहीं वरन एक स्पष्ट भौतिक ईकाई भी है, जो कि मध्य हिमालय का एक हिस्सा है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अपनी उत्तरी तथा दक्षिणी सीमाओं में जहां यह भूमि आबद्ध है वहीं पूर्वी एवं पश्चिमी सीमाओं में

लगभग 400 किमी. की लम्बाई में फेली उस विशाल श्रृंखला से बनती है, जो कि तिब्बत क्षेत्र से प्रवाहित सतलज का दक्षिणी पनढाल बनाती है। दक्षिणी सीमा पर तराई व भावर की एक चौड़ी पटटी इसको रूहेलखण्ड के मैदान (उत्तर प्रदेश) से अलग करती है। इसका अधिकतम विस्तार पूरब से पश्चिम तक 320 किमी. तथा उत्तर से दक्षिण तक 250 किमी. है। उत्तर की ओर तिब्बत तथा पूर्व की ओर नेपाल से लगने वाली अर्न्तराष्ट्रीय सीमा ने इस पूरे भूभाग को सामाजिक व सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण तथा सामरिक दृष्टि से संवेदनषील बना दिया है।

2001 की जनगणना के अनुसार उत्तराखण्ड की जनसंख्या 84,89349 थी, जिसमें 43,25,924 पुरूद्दा और 41,63,425 स्त्रियां थीं। जनसंख्या की दृष्टि से उत्राखण्ड देश का 20 वां बड़ा राज्य एवं क्षेत्रफल की दृष्टि से 18 वां है। यहां देश की कुल जनसंख्या का 0.83 प्रतिशत व्यक्ति निवास करते हैं। इस पर्वतीय प्रदेश की जनसंख्या 84,79,562 है। इसमें पुरुषों की संख्या 43,16401 तथा महिलाओं की संख्या 41,63,161 है। यहां का जनसंख्या घनत्व 159 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। सबसे अधिक धनत्व हरिद्धार में 612 तथा सबसे कम उत्तरकाशी में 37 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। जनसंख्या की दृष्टि से देहरादून सबसे बड़ा व उत्तरकाशी सबसे छोटा जिला है। उत्तराखण्ड में पुरुष एवं महिला का अनुपात बहुत ही असंतुलित है। इस राज्य का लिंगानुपात 1000 : 964 है। इसका कुल क्षेत्रफल 53,483 वर्ग किमी. है जो देश के कुल क्षेत्रफल का 1.69 प्रतिशत है। साक्षरता की दृष्टि से उत्तरांचल की साक्षरता 51,75,176 है जिसमें पुरुष साक्षरता 30,44,487 तथा स्त्री साक्षरता 21,30,689 है।

उत्तराखण्ड से सम्बन्धित कुछ अन्य महत्वपूर्ण जानकारियां इस प्रकार है :—

प्रशासनिक ईकाइयां

जनपद	तहसील संख्या	विवरण	विकास खंड संख्या	विवरण
अल्मोड़ा	3	अल्मोड़ा (बारामंडल), रानीखेत (पाली) भिकियासैंण	11	स्यालदे, चौखुटिया, भिकियासैंण, ताड़ीखेत, सल्ट, द्वाराहाट, लमगड़ा, धौलादेवी, हवालबाग, ताकुला, भिकियाछाना

नैनीताल	5	नैनीताल, हल्द्वानी, रामनगर, धारी, कोष्याकुटौली	8	हल्द्वानी, भीमताल,रामगढ़ कोटाबाग, रामनगर, धारी, बेतालघाट, ओखलकांडा
चमोली	6	चमोली, जोशीमठ,कर्णप्रयाग थराली, पोखरी,गैरसैंण	9	जोशीमठ, बसौली, घाट कर्णप्रयाग,नारायण बगण,थराली,देवाल,पोखरी, गैरसैंण
उत्तरकाशी	4	पुरौला, डुंडा, भटवाड़ी, राजड़ी	6	मोरी, डुंडा, भटवाड़ी, चिन्यालीसौण, नौगांव
पौड़ी	5	पौड़ी, श्रीनगर, थैलीसैण, कोटद्वार, धुमाकोट	15	पौड़ी, श्रीनगर, थैलीसैण, कोटद्वार, धुमाकोट
टिहरी	5	टिहरी,प्रतापनगर,नरेन्द्रनगर,देव प्रयाग धनसाली	9	टिहरी, प्रतापनगर, नरेन्द्रनगर, देवप्रयाग धनसाली
छेहरादून	5	चकराता, देहरादून, विकासनगर, ऋषिकेश	6	चकराता, देहरादून, विकासनगर, ऋशिकेश
उधमसिंह नगर	4	काशीपुर, किच्छा, खटीमा, सितारगंज	7	काशीपुर, गदरपुर, रूद्रपुर, जसपुर, किच्छा, खटीमा, सितारगंज
बागेश्वर	2	बागेश्वर, कपकोट	4	बागेश्वर, कपकोट गरूड़ ताकुला
चम्पावत	1	चम्पावत	3	चम्पावत, लोहाघाट, टनकपुर
रूद्रप्रयाग	2	रूद्रप्रयाग, उखीमठ	3	उखीमठ, अगस्तमुनि, जखोली
हरिद्वार	3	हरिद्वार, लस्कर,रूड़की	6	लस्कर,रूड़की,भगवानपुर, नारसन, बहादुराबाद, खानपुर

उत्तरांचल के प्रमुख हिमनद (ग्लेशियर)

हिमनद	जनपद
गंगोत्री	उत्तरकाशी
नामिक	पिथौरागढ़
थ्मलम	पिथौरागढ़
पोटिंग	बागेश्वर
पिण्डारी	बागेश्वर
सुंदरढूंगा	बागेश्वर
कफनी	बागेश्वर

उत्तरांखण्ड के प्रमुख दर्रे

दर्रा	सम्पर्क क्षेत्र
श्रृंगकंठ	उत्तरकाशी –हिमाचल प्रदेश
थागला	उत्तरकाशी– तिब्बत
मुलिंग ला	उत्तरकाशी– तिब्बत
माणा अथवा डुंगरी ला	चमोली– तिब्बत
नीति	चमोली– तिब्बत
बारहोती	चमोली– पिथौरागढ़
कुगरी बिंगरी	चमोली– तिब्बत
दारमा	पिथौरागढ़– तिब्बत
लिपूलेख	पिथौरागढ़– तिब्बत
ट्रेलपास	बागेश्वर–पिथौरागढ़

उत्तरांखण्ड के प्रमुख पर्वत–शिखर

शिखर	समुद्र सतह से ऊँचाई (मी.) में	जनपद
नन्दा देवी	7816	चमोली
नंदा देवी (पूर्वी)	7434	चमोली
माणा	7273	चमोली
चोखम्बा	7138	चमोली
त्रिशूल	7120	चमोली
द्रोणागिरि	7066	चमोली
पंचचूली	6904	पिथौरागढ़
नंदाकोट	6861	बागेश्वर
बंदरपूंछ	6315	उत्तरकाशी

झींगा पालन : एक सामान्य जानकारी

ममता जोशी

उत्तराखण्ड राज्य में यद्यपि मत्स्य पालन अभी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में है तथापि इसने मत्स्य के साथ साथ झींगा पालन में भी अपने कदम बढ़ाऐ हैं। मत्स्य और झींगा दोनों ही प्रोटीन के पर्याप्त स्रोत तो हैं ही साथ ही यह अच्छी आय के स्रोत भी हैं जिससे इस राज्य की गरीब जनता अपना आर्थिक स्तर सुधार सकती है। वर्तमान में राज्य में मत्स्य पालन के साथ ही झींगा पालन को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। अब तक झींगा पालन का कार्य केवल समुद्रिक क्षेत्रों में किया जाता रहा है किन्तु आज इस दिशा में सरकार भी प्रयत्नशील है।

परिचय

भारतवर्ष में झींगों की लगभग अधिकांश प्रजातियां नदियों में पायी जाती हैं। झींगों की प्रमुख प्रजातियों में *माइक्रोब्रेकियम लैमेराई लैमेराई, माइक्रोब्रेकियम एफिनिस, माइक्रोब्रेकियम पिनियस, मरग्युएन्सिस, प्लेबेजस, मैटापिनस बैनेटई, मैटापिनस मोनोसिरोज, माइक्रोब्रेकियम असमैन्सिस पैनिन्स्युलैरिस, माइक्रोब्रेकियम रोजनबर्गी, मालकमसोनी, माइक्रोब्रेकियम डोबसोनी, पिनियस इन्डिकस, बिरमानिकम चोपरई, इण्डियन व्हाइट प्रौन, टंजिला प्रौन, बनाना प्रौन, रैड लैग बनाना प्रौन,* आदि प्रमुख हैं। इनमें *माइक्रोब्रेकियम रोजनबर्गी* सबसे अधिक वृद्धि करने वाला सबसे बड़ा झींगा है। इसका आकार 300 मि.मी. व वजन 350 ग्रा. तक पाया जाता है। यह प्राणी जगत के क्रस्टेशियन समुदाय के अर्न्तगत डेकापोडा आर्डर व पालीमोनिडी परिवार में आते हैं।

उक्त प्रजातियों में एक प्रजाति *माइक्रोब्रेकियम असमैंन्सिस पैनिन्स्युलैरिस* कुमायूं के पर्वतीय क्षेत्र की पश्चिमी रामगंगा नदी में बहुतायत से पाऐ जाते हैं। यह नदी उत्तराखण्ड के पर्वतीय जिले अल्मोड़ा के चौखुटिया नामक कस्बे के गनियापानी के समीप बहती है। इसकी समुद्र तल से ऊँचाई 1150 मीटर है।

झींगे को मीठे पानी तथा हल्के लवणीय जल दोनों प्रकार के परिवेशों में पाला जा सकता है, इस कारण झींगा पालन मत्स्य पालन की अपेक्षा अधिक सुगम है। सामान्य परिस्थितियों में मछली की अपेक्षा झींगा अधिक समय तक जिन्दा रह सकता है। तालाब में उपलब्ध सभी प्रकार का आहार झींगा आसानी से ग्रहण कर सकता है क्योंकि इसकी प्रकृति सर्वभक्षी होती है। बाजार में ऊंची कीमत मिलने के साथ–साथ

पहचान

झींगे का शरीर लम्बा, लगभग शंक्वाकार तथा दोनों पार्श्व से समान होता है। यह आकृति तैरने में न्यूनतम अवरोध उत्पन्न करती है। नर, मादा की अपेक्षा आकार में बड़े होते है। झींगे रंग में पारदर्शी सफेद या हल्के नीले रंग के होते है।

झींगे का शरीर 19 छोटे–छोटे खण्डों का बना होता है। परन्तु बाहर से देखने पर इनका शरीर दो भागों में विभाजित रहता है। अग्रिम भाग को सिफेलोथोरैक्स कहते हैं जिसमें 13 खण्ड होते हैं। पीछे के भाग को एब्डोमिन कहते हैं जिसमें 5 खण्ड होते हैं। इसके अंतिम 19 वें खण्ड को यूरोपौड कहते हैं। इसका पूरा शरीर काइटिन के बने बाहरी कवच से ढका रहता है जो इनकी वृद्धि के साथ साथ कवच बदलता रहता है। ये आकार में लम्बे व बेलनुमा बनावट के होते हैं।

स्थान का चयन

झींगा पालने के लिए स्थान का चयन वहां की टोपोग्राफी, मिट्टी का प्रकार, पूरे साल भर स्वच्छ व मीठे पानी की उपलब्धता, ट्रांस्पोटेशन अथवा हस्तांतरण व पर्याप्त विद्युत आपूर्ति आदि पर निर्भर करता है। चयनित स्थल की मिट्टी की इस दिशा में बहुत महत्ता होती है क्योंकि मिटटी की रचना तथा उसमें उपस्थित विभिन्न पोषण तत्वों का जल जीवों के उत्पादन पर सीधा असर पड़ता है। मिटटी तालाब के जल में पोषण तत्व उपलब्ध कराती है तथा तल पर सड़ते गलते जैविक पदार्थ के खनिजीकरण में मदद करती है।

तालाब एवं पानी

झींगो के पालन हेतु तालाबों के आकार–प्रकार एवं गहराई में भिन्नता हो सकती है। किन्तु उचित प्रकार से पालन के लिए प्रत्येक तालाब 300 से 1200 वर्ग फिट क्षेत्रफल तक का आयताकार होना चाहिऐ। तालाब की लम्बाई हवा के अनुरूप होनी चाहिए ताकि तेज हवा के कारण पानी की लहरों से बांध कम कटे। तालाब की गहराई 4 से 6 फिट तक हो सकती है। तालाब में पानी की उचित व्यवस्था के लिए उसका प्रवेश द्वार जल निकास द्वार की ओर ढालू होना चाहिए। कम गहरे तालाब में पानी गर्म हो सकता है और जलीय पौधों को उगने में सहायता मिल सकती है अतः तालाब की उंचाई पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। तालाब का प्रवेश द्वार और निकास द्वार पर जाली लगाना चाहिए जिससे कि अवांछित पदार्थ या जन्तु

किग्रा. प्रति हैक्टेअर की दर से हो सकती है। चूना लेपन के पश्चात तालाब में 50–60 सेमी. तक पानी भर दिया जाना चाहिए पानी भरने के साथ खाद डाली जाती है। इसके अतिरिक्त यूरिया और सिंगल सुपर फास्फेट क्रमशः 20–22 किग्रा./हैक्टे. तथा 60–65 किग्रा. /हैक्टे. की दर से प्रयोग किया जा सकता है। इन सबकी आपूर्ति से तालाब के पानी मे कार्बनिक पदार्थों की सम्पूर्ण मात्रा में वृद्धि हो जाती है जिस कारण तालाब में जीव–जन्तु की बढ़ोत्तरी होने लगती है जोकि झींगों का प्रमुख आहार होता है। इन कार्बनिक–अकार्बनिक पदार्थों की आपूर्ति के पश्चात एक हफ्ते के बाद तालाब के पानी का रंग हरा या बादामी होने लगता है। उस समय तालाब में पानी की गहराई आधा मीटर से बढ़ाकर डेढ़ मीटर तक कर देनी चाहिऐ। इसके बाद तालाब प्राकृतिक भोज्य पदार्थों की उत्पत्ति के साथ झींगो के पालन के लिए तैयार हो जाता है।

उत्पादन एवं निष्कासन

6–7 माह के पालन–पोषण के पश्चात झींगो के चिलट पैरों के अग्रिम भाग का रंग नीला हो जाता है। जिसका तात्पर्य यह है कि अब इन झींगों में अतिरिक्त वृद्धि नहीं होगी। अतः इन झींगों को निकाल कर बेच दिया जाना चाहिए। प्रातःकाल का समय झींगों को तालाब से निकालना अच्छा रहता है क्योंकि इस अवधि में तापक्रम कम रहता है। प्रायः यह देखने में आया है कि सभी झींगे तालाब में समान दर से नहीं बढते। इसके लिए समय समय पर जाल चलाकर बिक्री योगय 50–60 ग्रा. या इससे अधिक वजन के झींगों को निकालकर बेच देना चाहिए। अंत में झींगा निकालने के समय निकास द्वार पर जालीदार कपड़ा बांधकर तालाब का सारा पानी बाहर करने के बाद सभी झींगे निकाले जा सकते हैं। अब झींगों को साफ पानी से भली प्रकार धोकर, क्रेट में बर्फ की सतहों के बीच में रखकर बिक्री हेतु बाजार के लिए भेज दिया जाता है।

गुणों की खान है – नमक

डी. डी. ओझा

स्म्भवतः नमक, एक प्रकृति का ऐसा उपहार है जिसकी जरूरत न केवल मानव वरन मवेशियों को भी होती है। पृथ्वी पर प्रारम्भिक जीव जन्तुओं का विकास सागर के रूप में उत्तर से दक्षिण तक फैली थी। कुछ समय तक दक्खिनी के नाम से प्रसिद्व उत्तर भारत की यह भाषा दक्षिण में लम्बें समय तक शासन, साहित्य, व्यापार और जनसंपर्क भाषा बनी रही। मुगल शासन काल में यद्यपि फारसी को राजकाज की भाषा घोषित कर दिया गया परन्तु फिर भी हिन्दी अपने ढ़ग से राजभाषा के रूप में विकसित होती रही। अकबर, जहाँगीर को हिन्दी का अच्छा ज्ञान था। औरंगजेब की पुत्री जेबुन्निसा हिन्दी में कविताएं लिखती थी। शेंरशाह सूरी काल के सिक्खों पर फारसी, हिन्दी का प्रयोग मिलता है। अधिकांश मराठी राजाओं की राजभाषा हिन्दी ही थी। अंग्रेज जहाँ अंगेजी का प्रचार, प्रसार कर रहे थे वहाँ वह यह भी जानते थे कि हिन्दी भारत की प्रतिनिधि भाषा है। अत; उन्होंने इसे विकसित नहीं होने दिया और अंग्रेजी को भारतीय पर लाद दिया। जब सन् 1947 में भारत स्वतंत्र हुआ तक तब अंग्रेजी देश की शिक्षा संस्थाओं, दफ्तरों, अदालतों, विधान सभाओं में अपना प्रभुत्व जमा चुकी थी। अंग्रेजी की भाषा संबधी जो भी नीति रही हो, हिन्दी ने अपना अस्तिस्व बनाए रखा। स्वतंत्रा के लिए जूझने वाले विभिन्न प्रांतो के लोगो के द्वारा विचार विमर्श मिली जुली भाषा में होता था इससे हिन्दी को अत्याधिक बल मिला। स्वतंत्रा आन्दोलन की बागडोर गांधी जी के हाथ में थी, गांधी जी जनमानस की चेतना का पहचान कर दूरगामी दृष्टि रखते थे। इसीलिए उन्होंने हिन्दी और हिन्दुस्तानी का प्रचार किया और हिन्दी का एक राजनीतिक और सामाजिक दर्शन प्रदान किया। स्वतंत्रा प्राप्ति के बाद भारत के संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। धारा 343 (1) में साफ शब्दें में उल्लेख है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। यहाँ यह बात दिया जाना उचित ही होगा कि देवनागरी लिपि न केवल संसार की सरलतम लिपि है बल्कि सर्वाधिक वैज्ञानिक भी है। इसी धारा में प्रावधान है कि भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप का ही प्रयोग किया जाए । ये अंक संसार को भारत की देन है और इन्हें संसार के अधिकतर देशों ने स्वीकार किया है। संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया जाना तार्किक एवं संगत है। भारत जैसे विशाल देश में भाषा के स्वरूप में विविधता मिलना स्वाभाविक है। क्षेत्रीय अवमिश्रण से हिन्दी में सामाजिक संस्कृति और शैली के नए आयामों को विकसित होने का अवसर मिलता है। भाषा में भिन्न–भिन्न सामाजिक प्रयोजनों के लिए उसमें शैली की भिन्नता भी स्वाभाविक

समृद्ध बना लेगी। अत; हिन्दी के उज्जवल भविष्य के लिए हमें अपने शिक्षण संस्थानों का माध्यम हिन्दी करना होगा। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी भावी पीढ़ी अर्थात् बच्चों को बुनियादी शिक्षा के स्तर पर ही राष्ट्रभाषा हिन्दी के साथ जोड़े। श्री बी. जी. खेर की अध्यक्षता में गठित राजभाषा आयोग (1955) की निशुल्क व अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का माध्यम राज्यों की प्रादेशिक एवं अंत; प्रातीय संबधों के लिए हिन्दी रखने की सिफारिश पर कार्रवाही न करके हमने हिन्दी का बहुत अहित कर दिया है। शिक्षा की समस्याओं पर विचार करने के लिए पीछे एक उच्चस्तरीय आयोग बना था। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ. कोठारी की इसके प्रमुख थे। इस आयोग ने अपने विस्तृत प्रतिवेदन में एक जगह यह भी लिखा है–केरल मे मलयालम से भी अधिक युवक युवतियाँ हिन्दी पढ़ रहे हैं। प्रारंभ में मुझे कुछ अजीब सी बात लगी। भला यह कैसे संभव है कि अपनी मातृभाषा से भी अधिक हिन्दी कहीं पढ़ी जाए। पर वहाँ जाकर जब पता लगाया, तो बात सही थी। राज्य के कुछ व्यक्तियों से जब उसका कारण पूछा, तो उन्होंने कहा– शिक्षा का प्रतिशत भारत में सब से अधिक हमारे यहाँ है।

उत्तरांचल की लोक संस्कृति, कला एवं साहित्य

अमित कुमार जोशी, आर.एस. पतियाल एवं टी.एम. शर्मा
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

उत्तरांचल की भाषा और बोलियां काफी पुरानी हैं। यहां की भाषा स्थानीय बोलियों के साथ ही विकसित हुयी। यहां की प्रकृति, जलवायु एवं विशिष्ट भौगोलिक परिस्थितियों का लोक जीवन तथा उसकी अभिव्यक्ति पर गहरा प्रभाव पड़ा है। पर्वोत्सव, मेलों, ब्रतों, सांस्कृतिक समारोहों और धार्मिक अनुष्ठानों आदि के अवसर पर यहाँ के लोक साहित्य के विविध रूप प्रकट होते हैं। उनमें प्राचीन काल से लेकर आज के नव स्फुरित लोक काव्य तक का श्रवण–दर्शन किया जा सकता है।

कुमायूं–गढ़वाल के लोक गीतों की परम्परा बहुत पुरानी है, किन्तु उसके मूल रूप में आज सुरक्षित नहीं है। आजकल यहां गाऐ जाने वाले लोक गीतों के प्रमुख रूप इस प्रकार हैं– संस्कार गीत; नृत्य गीत, झोड़ा, चांचरी, छपेली, थडया, चॉफुला, छोपती, प्रणय–गीत, ऋतु–गीत, श्रतुरैंण, खुदेड़, होली, बारहमासा, देवी–देवता सम्बन्धी गीत, अन्य गीत, बैर, छूड़े, कृषि गीत, बाल–गीत, सामयिक गीत आदि।

लोक –गीत साहित्य की सबसे पुरानी विधा होते हुए भी आज पुराने गीत अपने मूल रूप में उपलब्ध नहीं हो पाते, क्योंकि मौखिक परम्परा में सुरक्षित रहने वाले इन गीतों में स्थान, समय और स्थिति के अनुसार प्रक्षेपण और परिवर्तन भी होते रहते हैं।

यदि 600 ई.पू. भारतीय बोलियों का काल माना जाए तो भी गढ़वाली और कुमायूंनी के लोकगीतों की परम्परा बहुत पुरानी मानी जा सकती है। यहां के लोक गीत अपनी युगभावाना को भी प्रकट करते हैं।

लोक गाथाऐं

कुमायूं–गढ़वाल की उपलब्ध गाथाओं के अध्ययन से यही प्रतीत होता है सामंतवादी व्यवस्था के आरम्भ होने से पूर्व ही इनकी रचना लोक में व्याप्त थी। 'पवाड़ा' और 'भड़ौ' को उत्तरांचल में कत्यूरी शासन के बाद हुए अनेक सामन्तो को प्रशस्ति गीत कहा जा सकता है। उस काल मे सत्ता के लिए लड़ने वाले छोटे छोटे सामंतों या भेड़ों के अपने अपने चारण होते थे, जो युद्ध स्थल में चंफ और हुड़कों को बजाते थे तथा वीरों के प्रशस्ति गीत रचकर गाते थे। चंफ्या हुड़किया, भाट आदि इन्ही गायकों के वंशज माने

व्यक्तियों तथा देवी–देवताओं की लोक वार्ताऐं हैं जो अपने समय में महाक्रूर या जन हितैशी रहे। दूसरे प्रकार के अन्तर्गत काली, हनुमान आदि की लोकवार्ताऐं भी आती है।

लोक कथा

उत्तराखण्ड में सर्दियों की ठण्डी लम्बी रातों में आग जलाकर उसके चारों ओर बैठे लोगों की कथाऐं सुनने सुनाने की परम्परा यहां प्राचीन काल से चली आयी है। आम तौर पर कोई बढ़ा–बूढ़ा सयाना व्यक्ति कथाऐं सुनाता है, बाकी लोग **अॅं**' 'अं' करते हुए अपनी सहृदयता के कथावाचक अपनी जानकारी की समस्त प्रकार की कथाओं के साथ साथ अपने अनुभव, ज्ञान व कल्पनाओं को सजोंकर नयी पुरानी सभी प्रकार की कथाऐं सुनाता है। इन कथाओं में अत्यंत वैविध्य है। फिर भी इनके वर्ण्य–विषय को समझने के लिए इन्हे निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है–

- पशु–पक्षी सम्बन्धी कथाऐं
- अलौकिक कथाऐं
- हास्य कथाऐं
- व्रत कथाऐं
- समाधान मूलक कथाऐं

लोक नृत्य

उत्तराखण्ड के अधिकांश नृत्य सामूहिक हैं और प्रायः गीतों के साथ किऐ जाते हैं। इसलिए लोक गीतों का एक बड़ा भाग नृत्य गीतों के रूप में ही जाना जाता है। नृत्यों और गीतों के कई प्रकार हैं जिनमें कुछ मुख्य हैं–

1. झोड़ा अथवा चाचरी
2. जागर
3. चैाफुला
4. छोलिया
7. सुई और थाली नृत्य
8. थड्या
9. छोपती
10. लांग या हुड़का–हुड़क्यानी

उत्तराखण्ड के त्यौहार

शेष भारत के समान ही यहां भी पूरे वर्ष भर उत्सव मनाऐ जाते हैं। भारत के प्रमुख उत्सवों जैसे—होली, दीपावली, दशहरा आदि के अतिरिक्त यहाँ के कुछ स्थानीय त्यौहार हैं जो हैं—

देवीधूरा मेला (चम्पावत)	उत्तरायणी मेला (बागेश्वर, हल्द्वानी)
पूर्णागिरी मेला (चम्पावत)	विशु मेला (जौनसार भावर) हरेला (भीमताल)
गंगा—दशहरा	नंदा—देवी राजजात
नंदा देवी मेला (अल्मोड़ा)	गौचर मेला (चमोली)
बसंत पंचमी (रामनगर)	वैशाखी (उत्तरकाशी)
माघ मेला ;उत्तरकाशी)	बिखौती मेला (द्वाराहाट)

उत्तराखण्ड के प्रमुख खान—पान

उत्तराखण्ड का खान—पान बहुत सीधा—सादा एवं सरल होने के साथ साथ पौष्टिक भी है क्योंकि यहां के खान पान में कम मसालों का प्रयोग किया जाता है। यहां के विशिष्ट खान—पान हैं:

- आलू—टमाटर की थिचौड़ी
- चैंस
- झोली
- कापिलू
- पीनालू—गडेरी साग
- झिंगोरा
- डुबके
- सिंसौड़—साग
- [illegible]

जलवायु परिवर्तन

स्मिता नरियाल
सैन्टर फार इन्वायरन्मेंट एजूकेशन

जलवायु शब्द किसी एक स्थल विशेष पर वर्षों तक बने रहने वाले सामान्य मौसम को इंगित करता है। जलवायु विज्ञानी किसी स्थान की जलवायु पता करने के लिए कम से कम तीस वर्षों का समय आवश्यक है।

पृथ्वी की जलवायु सूर्य,वायुमण्डल,सागर, भूतल तथा जैव मण्डल के परस्पर जटिल सम्बन्धों का परिणाम है। हिम युग से लेकर आज के औद्योगिक युग तक पृथ्वी की जलवायु में परिवर्तन होता रहा है।

परिवर्तन वातावरण की मूलभूत विशेषता है। कुछ परिवर्तन शीघ्रता से हो जाते है जबकी कुछ, हजारों वर्षों का समय लेते है। परिवर्तन का प्रभाव पूरे तन्त्र के साथ–साथ उसके अन्य अंगों पर भी अवश्य दिखायी देता है। जलवायु परिवर्तन के प्राकृतिक तथा मानव जनित दोनो कारण है। अधिकांश प्राकृतिक परिवर्तन एक नियमित क्रमानुसार होते हैं। अतः उनके परिणामों का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है मानवीय क्रिया कलापों के कारण जलवायु में होने वाले परिवर्तन अपेक्षाकृत न अप्रत्याशित तेजी आ गयी है। वैज्ञानिको का मानना है। कि 2050 तक विश्व के तापमान में 1.5 से 4.5 सेल्सियस तक कह बढोत्तरी हो जायेगी। जलवायु में हो रहे तीव्र परिवर्तनों के कई कारण है। इनमें एक प्रमुख कारण वायुमण्डल में मानवीय क्रियाओं के फलस्वरूप कुछ गैसों की मात्र का बढना है। वाहनों तथा उद्योगों का धुआँ तथा समाप्त हो रहे वन इन गैसों की वृद्धि मे सहायक है। जिस तेजी से वाहनों तथा उद्योगो से निकलने वाले गैसीय पदार्थों की मात्रा वायुमंडल में बढ़ रही है उससे जलवायु में किसी वृहद परिवर्तन का खतरा बढ रहा है। तापमान की इस वृद्वि से पृथ्वी के गर्म होने का कारण मुख्यतः ग्रीन हाउस प्रभाव ही है।

ग्रीन हाउस प्रभाव तथा पृथ्वी के तापमान में वृद्धि

सामान्यतः पृथ्वी सूर्य की किरणों को अवशोषित करके ऊष्मा प्राप्त करती है, इसमें से ऊष्मा की कुछ मात्रा वापस मायुमण्डल में विकिरित हो जाती है। वायुमण्डल में रहने वाली कुछ प्राकृतिक गैंसे इस बाहर जाती हुयी उष्मा को सोखकर रोक लेती है और इसे वापस अंतरिक्ष में लौटने नहीं देती। इससे पृथ्वी की सतह गर्म होती है और ट्रोपोस्फियर (क्षोभ मण्डल) के तापमान में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। यह घटना

क्लोरोफ्लोरो कार्बन ऐसी गैसे हे जो ऊष्मा को अवशोषित करती है।इन गैसो को ग्रीन हाउस गैसे कहते हैं क्योकि ये ग्रीन हाउस की कॉच की दीवार की तरह काम करती है। इनके द्वारा उवशोषित उष्मा बाहर नहीं जा सकती। क्षोभ मण्डल (ट्रोपोस्फियर) में ऊष्मा का इस प्रकार रोका जाना ही ग्रीन हाउस प्रभाव है। इन गैसो की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि या कमी हमारी जलवायु को तदनुसार परिवर्तित करने में सक्षम है। मानवीय क्रियाओं द्वारा आज वायुमण्डल में ग्रीन हाउस गैसो के द्वारा से नाटकीय परिवर्तन हो रहा है। वाहनों तथा उद्योगों से होने वाला प्रदूषण वायुमण्डल में कार्बन डाई उाक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड तथा सल्फर डाई आक्साइड की मात्रा में वृद्वि कर रहा है। साथ ही कुछ मानव निर्मित रसायन यथा क्लोरो–फ्लोरो कार्बन्स जो Green house gases की तरह व्यवहार करते है, वे भी वायु मण्डल में मिल रहे हैं। इसी कारण शनैः–शनैः पृथ्वी की सतह का तापमान बढ़ रहा है और यह गर्म हो रही है। ग्लोबल वार्मिंग शब्द का प्रयोग वायु मण्डल में ग्राने हाउस गैसों की मात्रा और सघनता बढ़ने के कारण होने वाले जलवायु परिवर्तन की व्याख्या के लिए किया जाता है।

ग्लोबल वार्मिंग (Global Warming) का प्रभाव

क्या होगा यदि पृथ्वी का तापमान थोड़ा बढ़ जाये ध्क्या यह यह सचमुच चिन्ता का विषय है। आइये ग्लोबल वार्मिंग के कुछ प्रभावों पर दृष्टिपात करते हैं। ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्र की सतह का ऊँचा होना, जैव विविधता का क्षरण एवे दुलर्भ जैव प्रजातियों का विलुप्त होना, दुर्भिक्ष सूखा एवं अतिवृष्टि आदि कुछ ऐसे परिणाम हैं जो पृथ्वी के निरन्तर गर्म होते जाने से सामने आयेगे।

समाधान की दिशा में

कोयले तथा जीवाश्मिक ईधन सी एफ सी के प्रयोग में कमी तथा वृक्षारोपण ग्रीन हाउस गैसों का प्रवाह कम कर सकता है। कुछ ठोस कदम निम्नवत हो सकते हैं।

- जीवास्मिक ईंधन के प्रयोग में कमी
- नवीकृत किये जा सकने वाले संसाधनों का प्रयोग
- ऊर्जा की प्रभाव क्षमता
- वनों को नष्ट होने से रोकना तथा अधिक मात्र में वृक्ष लगाना।

शीतजल मत्स्य अनुसंधान निदेशालय

त्रिवेणी माधव शर्मा
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद,
का यह मत्स्य संस्थान।
कर रहा नित – नवीन,
शीतजल मात्स्यिकी पर अनुसंधान ।।

अनुसंधान एवं विकास इकाई,
हृदय है हमारे संस्थान का।
विभिन्न विषयों पर कर विश्लेषण,
होते जिसमें नूतन अन्वेषण।।

भीमताल में इसकी स्थिति,
महाशीर बीज उत्पादन इकाई।
कृत्रिम प्रजनन कर जिसमें विकसित करते,
प्रतिवर्ष लाखों स्विम अप फ्राइ।।

संस्थान में पर्वतीय क्षेत्रों के नदी तालाबों में,
महाशीर अंगुलिकाओं का संग्रह कराया है।
विलुप्त प्राय इस प्रजाति को,
विलुप्त होने से बचाया है।।

संस्थान के चम्पावत विकास केन्द्र ने,
विकसित की असेला मत्स्य की,
कृत्रिम प्रजनन प्रणाली।
जिसने शीतजल मत्स्य विकास को,
और अधिक गति दे डाली।।

विभिन्न क्षेत्रों से आए प्रशिक्षु,
शीतजल मात्स्यिकी पर प्रशिक्षण करते हैं।
मत्स्य विकास पर विभिन्न प्रशिक्षण,
संस्थान में क्योंकि प्रतिपल चलते हैं।।

कुछ पल तो जी लूं

किरन बेलवाल
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

आज फिर से जिन्दगी से, कुछ चुराने को जी चाहे,
चुरा लूं एक पल में ऐसा, जी भर के जिसमें जिया जाऐ।
चुरा लूं वो पल की जिसमें, किरण आशा की छिपी है।
मासूम, शिशु–सी नवेली,
वक्त की आंधी में खोई
कहीं सहमी–सी वो चंचल
मुस्कुराहट मेरी बसी है।
चुरा लूं एक पल की जिसमें, वक्त कुछ थम– सा गया हो।
लौट कर जो फिर ना आए,
उसमें खुद ही लौट लूं मै,
फिर से बीते लम्हे जी लूं
कुछ कदम पीछे चलूं मैं।
चुरा लूं एक पल की जिसमें, जियूं बस मेरे लिए मैं।
मुझे उन से ना गिला हो,
उन्हे मुझसे हो ना शिकवा
मेरी राहें मैं चलूं और,
वो चलें अपना कारवां।
चुरा लूं एक पल की जिसमें, चाहूं जो वो ही करूं मैं।
जिन्दगी की स्लेट को
अपने अरमानों से लिखूं मैं,
जिन्दगी के रंग भरूं मैं,
जिन्दगी जी भर जियूं मैं।

भगवान का परिचय

हयात सिंह चौहान
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

निराकार है परमात्मा, परम पिता शिव नाम,
पतितों को पावन बनाना यही है उनका काम।
धर्म ग्लानि के समय आते देने गीता ज्ञान,
ब्रह्म लोक से आते हें करने सबका कल्याण ।।
सर्व व्यापी नहीं हैं भगवान,
गुरु और चेले में जबकि दोनों में भगवान।
क्या मंत्र दे रहे कान में भगवान को भगवान,
मन्मनाभव मंत्र देता निराकार भगवान ।।
सर्वव्यापी नहीं हो सकते हैं भगवान,
इन्सान और जानवर में दोनों में भगवान।
जानवर को मारकर क्यों खा लेता है इंसान,
झूठ को भी सच कहना और बढ़ाना शान।।
सर्वव्यापी नहीं हो सकते हैं भगवान,
भक्त के भी अंदर में बैठा है भगवान।
भक्त फिर क्यों कह रहा है दर्शन दो भगवान,
बीमार व्यक्ति कह रहा हिम्मत दो भगवान।।
सर्वव्यापी नहीं हो सकते हैं भगवान,
भगवान का भी डर नहीं क्या कर रहा इंसान।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार

घनश्याम नाथ झा, प्रेम कुमार एवं एस. अली
शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

हम जानते हैं कि मस्तिष्क का विकास सभी व्यक्तियों में ऐक समान नहीं होता, न ही यह किसी खास उम्र, स्थान आदि पर निर्भर करता है। किसी छोटी जगह से रहने वाला, छोटी उम्र का व्यक्ति भी विकसित मस्तिष्क का मालिक हो सकता है। मस्तिष्क का विकास लिंग विशेष पर निर्भर नहीं करता। लाखो में कोई एक ऐसा व्यक्ति होता है जिसका मस्तिष्क इस स्तर तक विकसित होता है कि वह कोई आविष्कार कर सके।

एक विकसित मस्तिष्क के व्यक्ति के दिमाग में हमेशा कुछ नया करने की चाहत रहती है। वह किसी समस्या को , आम लोगों से अलग ढंग से सोचता है और उसका समाधान निकालने की कोशिश करता है। इस तरह के व्यक्ति के मन में नित्य नये–नये विचार आते रहते हैं और यदि उसको अपने इस नये विचारो पर काम करने का मौका और सुविधा मिलता है तो एक नया या विकसित आविष्कार होता है।

मस्तिष्क की ऐसी अभिव्यक्ति जो किसी आविष्कार अथवा कोई साहित्यिक या कलात्मक कार्य में बदली जा सके जैसे–कोई पहचान चिन्ह, प्रतीक, नाम, प्रतिमाएं जो वाणिज्य में इस्तेमाल किया जाता है, बौद्धिक सम्पदा (Intellectual Property) कहलाता है। दूसरे शब्दो में, वह कोई भी वस्तु, जो किसी व्यक्ति के मस्तिष्क की ऊपज हो, जैसे कोई शब्द, वाक्यांश, प्रतीक, डिजाइन, संगीत, काव्य, कलात्मक कार्य खोज (Discovery) एवं आविष्कार (Invention) जिसका कोई आर्थिक या सामाजिक विकास में महत्व हो वह व्यक्ति की बौद्धिक सम्पदा कहलाती है। शब्द बौद्धिक सम्पदा का उपयोग उन्नीसवीं शताब्दी में प्रारम्भ हुआ तथा 20वीं शताब्दी में यह शब्द संयुक्त राज्य अमेरिका में आत रूप से उपयोग में आने लगा।

यह बौद्धिक सम्पदा, जिसके विकास में किसी व्यक्ति अथवा कंम्पनी ने अपनी जीवन गुजार दी, अगर सुरक्षित नहीं किया जाये तो क्या होगा? आपकी अपनी सम्पदा किसी और के हाथ जा सकती है जो इसका गलत इस्तेमाल करके मुनाफा कमा लेगा। साथ ही, वह बौद्धिक सम्पदा, जो किसी देश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती थी, किसी व्यक्ति अथवा स्थान तक ही सीमित रह जायेगी, उसका प्रचार प्रसार नहीं हो पायेगा। इसलिये किसी भी बौद्धिक सम्पदा की सांबैधानिक सुरक्षा जरूरी है।

लाभ उठा सके। साथ ही, नियम यह भी सुरक्षित करता है कि यह सम्पदा आम आदमी की जरूरत के अनुसार उस तक पहुँच सके।

निम्नलिखित दो कारणो से बौद्धिक सम्पदाओं को बचाने के लिये कानून बना है:—

अ) रचनाकार को एक सांबैधानिक, नैतिक और आर्थिक अधिकार प्रदान करने के लिये ताकि वो अपनी रचना को ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाते हुए ज्यादा से ज्यादा पारितोषिक पा सके।

ब) रचनात्मकता को बढ़ाबा, विस्तार और फेयर ट्रेड (fair trade) को बढाबा देने के लिये, जो की देश के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में सहायक सिद्ध हो। बौद्धिक सम्पदा को मुख्यरूप से निम्नलिखित भागों में विभक्त किया जा सकता है:

1) कॉपीराइट (Copyrights),
2) ट्रेडमार्क (Trademarks),
3) पैटेंट (Patents),
4) इंडस्ट्रियल डिजाइन (Industrial Designs)
5) ट्रेड सेक्रेट्स (Trade Secrets) और
6) भौगोलिक संकेत (Geographical Indications)

कॉपीराइट

यह एक प्रकार अधिकार है जिसके तहत किसी लेखक या रचनाकार को उसके कार्य के कॉपी, वितरण एवं उपयोग का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। कॉपीराइट नियम के तहत सुरक्षित रचना का उपयोग कोई दूसरा व्यक्ति तब तक नहीं कर सकता जब तक वह रचनाकार से अनुमति नहीं ले लेता।

आमतौर पर, रचना को कॉपीराइट सुरक्षित करने के लिये किसी प्रकार के रजिस्ट्रेशन की जरूरत नहीं है। केवल, शै रचनाकार का नाम एवं रचनावर्ष (उदाहरण: झा, 2011 लिख देने से रचना अपने आप में सुरक्षित हो जाती है। वैसे भारतीय संबिधान के कॉपीराइट एक्ट 1957, जो जनवरी 1958 से कार्य रूप में आया, जिसका पाँच बार संशोधन हो चुका है (1983, 1984, 1992, 1994 and 1999), के तहत, किसी रचना के रजिस्ट्रेशन का आवेदन, फार्म– IV (Form-IV) को भरकर, निर्धारित शुल्क के सपमि, शिक्षा विभाग, नई दिल्ली के कॉपीराइट कार्यालय में जमा किया जा सकता है। प्रक्रिया पूर्ण होने पर रजिस्ट्रेशन भी प्राप्त किया जा सकता है। यह रजिस्ट्रेशन रचनाकार के जीवन प्रयंत तथा तत्पश्चात 50 वर्षों तक

ट्रेडमार्क

किसी व्यक्ति, व्यापारिक संगठन अथवा कानूनी इकाई के द्वारा, उसके उत्पाद अथवा सेवा को अन्य किसी उत्पाद या सेवा से पृथक करने के लिये उपयोग में लाये जा रहे किसी विशिष्ट संकेत या सूचक को उसका ट्रेडमार्क कहते हैं। इस सूचक या संकेत के द्वारा, ग्राहकों को, कम्पनी यह दर्शाती है कि यह उत्पाद एवं इसकी गुणवत्ता, अन्य से भिन्न है।

ट्रेडमार्क को दर्शाने के लिये निम्नलिखित संकेत उपयोग में लाया जाता है :–

- बिना रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क के लिये,
    - बिना रजिस्टर्ड सर्विस मार्क के लिये,
    - रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क के लिये।

एक पारम्परिक ट्रेडमार्क, किसी नाम, शब्द, मुहावरा, लोगो (Logo), प्रतीक (Symbol), डिजाइन या इन सब के मिश्रण से बनता है। जबकि, किसी खास रंग, गंध या ध्वनि पर आधारित ट्रेडमार्क गैरपारम्परिक कहलाता है।

किसी उत्पाद या सेवा (Goods of Services) को बाजार में लाने के लिये, यह जरूरी नहीं कि उसका रजिस्ट्रेशन कराया जाये। लेकिन, इस उत्पाद या सेवा के गैरकानूनी उपयोग को रोकने के लिये यह जरूरी है कि उसका रजिस्ट्रेशन कराया जाये।

भारत में, ट्रेडमार्क एक्ट, 1999 (Trade Marks Act. 1997), जो कि 15 सितम्बर, 2003 से कार्य रूप में आया, के तहत कोई भी व्यक्ति अपने उत्पाद या सेवा का रजिस्ट्रेशन, ट्रेडमार्क रजिस्ट्रेशन ऑफिस (Trademark Registration Office), जो कि मुंबई, दिल्ली, कोलकाता, चेन्नई एवं अहमदाबाद में स्थित है, से करवा सकता है। जिसके लिये, आवेदन फार्म, TM-1, भरकर, 2500/रु. शुल्क के साथ ऊपरलिखित किसी भी ऑफिस में जमा करना पड़ता है। एक रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क 10 पश्चात, प्रत्येक 10 वर्ष पर, नवीनीकरण कराना पड़ता है।

पैटेंट

पैटेंट, एक प्रकार का अनन्य एकाधिकार (Exclusive Monopolistic Rights) हैं, जो किसी आविष्कारक

चूंकि, एक व्यक्ति अपने जीवन का अमूल्य समय और धन किसी आविष्कार के पीछे लगाता है, तक जा कर कहीं वह कामयाब हो पाता है। अतः, पैटेंट, उस वयक्ति (आविष्कारक) को, सरकार द्वारा निर्धारित एक रिवार्ड है जिसका लाभ उसे 20 वर्षों तक मिलता है (Patents are granted वित 20 years in India and also in other WTO member countries) इन 20 वर्षों के बाद, यह पैटेंटेड आविष्कार, पूरे समाज/देश की सम्पत्ति कहलाती है।

कोई आविष्कार, वास्तव में तभी पैटेंट कराया जा सकता है जब वह नया हो, कहीं भी उसका विवरण उपलब्ध न हो (Non-obvious) साथ ही साथ वह उपयोगी भी हो, जिसकी औद्योगिक उपयोगिता (Industrial Application) हो। पैटेंट अधिकार के तहत किसी आविष्कार को सुरक्षित करने के लिये यह जरूरी है कि अपने आविष्कार की प्रक्रिया, उपयोगिता आदि का उल्लेख उस देश, जहाँ पैटेंट सुरक्षा चाहते हैं, के पैटेंट कार्यालय में उपलब्ध, निर्धारित फॉर्म में करें तथा निर्धारित शुल्क के सपमि जमा करें।

भारतीय पैटेंट एक्ट, 1970 (Indian Patent Act 1970-Amendment, 2005), संशोधन–2005, के तहत किसी आविष्कार को सुरक्षित करने के लिये निम्नलिखित फॉर्मों को भरना पड़ता है, और उसे पैटेंट ऑफिस, कोलकाता, न्यू दिल्ली, चेन्नई या मुम्बई में जमा करना पड़ता है :–

फॉर्म–1 पैटेंट अनुदान का आवेदन (Application for the Grant of Patent)

फॉर्म–2 कार्य का अपूर्ण/पूर्ण विवरण (Provisional or Complete Specification)

फॉर्म–3 आवेदक का उपक्रम एवं व्याख्या (Statement and Undertaking by Application)

फॉर्म–5 आविष्कारक के तौर पर घोषणा (Declaration as to Inventor ship)

फॉर्म–26 किसी अन्य व्यक्ति या पैटेंट एजेंट की प्राधिकृति (Authorization of Patent Agent or any other Person)

औद्योगिक डिजाइन

किसी वास्तविक वस्तु का सौंदर्य मूल्य युक्त, ऐसा कोई भी आकार या ढाँचा, जो द्वीआयामी (Two Dimensional) या त्रिआयमी (Three Dimensional) हो, और जो किसी रंग, लाइन अथवा अन्य किसी सामान के मिश्रण से बना हो, साथ ही जिससे किसी तैयार वस्तु का पूर्णतः पूर्वानुमान लगता हो, इंडस्ट्रियल

अनुच्छेद 25 एवं 26 को ध्यान में रखते हुए, भारत ने भी, औद्योगिक डिजाइन सुरक्षा अधिनियम, जो डिजाइन एक्ट–2000 (Design Act, 2000) के नाम से जाना जाता है, बनाया। इस नियम के तहत, किसी भी औद्योगिक डिजाइन को रजिस्टर्ड करवाया जा सकता है, जो कि 10 वर्षों तक मान्य रहता है। तत्पश्चात, पुनः 5 वर्षों के लिये नवीनीकरण करवाया जा सकता है।

ट्रेड सीक्रेट

TRIPS समझौते के अनुच्छेद 39, धारा 7,भाग II, के अनुसार, कोई तकनीकी डाटा, अंदरूनी तरीका, प्रक्रिया, सर्वेक्षण का तरीका, कोई नया आविष्कार (जिसके लिये पैटेंट आवेदन नहीं दिया हो), ग्राहको की सूची, उत्पाद को बनाने का तरीका, तकनीक, सूत्र या चित्र, आदि ट्रेड सीक्रेट के अंतगर्त आता है। कोई कम्पनी, ज्यादा से ज्यादा, आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिये इन जानकारियों को जान–बुझ कर छुपाती है, जिससे, कम्पनियों के बीच प्रतियोगिता को बढाबा भी मिलता है।

ट्रेड सीक्रेट की सुरक्षा कें लिये कोई अलग ढंग से नियम नहीं बनाया गया है। ट्रेड सीक्रेट बनाए रखने के लिये भारत, TRIPS समझौता के सामान्य नियमों का पालन करता है।

भौगोलिक संकेत

किसी–किसी वस्तु की गुणवत्ता, उस वस्तु के उत्पादन के जगह पर निर्भर करती है, और उत्पादन की जगह बदलने से उसकी गुणवत्ता भी बदल जाती है। अतः इस तरह के किसी खास उत्पाद की गुणवत्ता को व्यक्त करने के लिये यह जरूरी है कि ग्राहकों को उसके उत्पादन की, जगह के बारे में भी बताया जाये। इस तरह के उत्पाद को, उस, जगह, जहाँ इसका उत्पादन हुआ है, के नाम के साथ दर्शाया जाता है, जैसे– **Burgundy** (एक विशेष प्रकार के **Wine** का नाम है जो वास्तव में फ्रांस के एक प्रांत का नाम है, और यहीं इसे बनाया जाता है।) **Champagne** (एक विशेष प्रकार के **Wine** का नाम है जो वास्तव में फ्रांस के एक प्रांत का नाम है, और इसे यहीं बनाया जाता है।), कश्मीरी शॉल (इसकी गुणवत्ता अन्य शॉल से भिन्न होती है।)।

अतः भौगोलिक संकेत, किसी उत्पाद का नाम या उस पर अंकित एक प्रकार का चिन्ह है जो उसके उत्पादन की जगह के बारे में बताता है।

किसी वस्तु के भौगोलिक संकेत (Geographical Indications of Goods (Registration and

है। किसी उत्पाद के भौगोलिक संकेत का रजिस्ट्रेशन भी, पैटेंट, डिजाइन और ट्रेडमार्क के कंट्रोलर जनरल से प्राप्त किया जा सकता है। वैसे, भौगोलिक संकेत रजिस्ट्री ऑफिस, चेन्नई में है।

निष्कर्ष

बौद्धिक सम्पदा चार दिवारी में कैद करने की चीज नहीं, बल्कि, यह निखारने और समाज तक पहुँचाने की चीज है। यह किसी सरकार की नहीं, बल्कि, आपकी भी जिम्मेदारी है कि अपने विकसित मस्तिष्क का और अधिक विकास करें, और देश में उपलब्ध, पैटेंट, ट्रेडमार्क, कॉपीराइट सुरक्षा, आदि नियमों का फायदा उठाएँ। जहाँ, पैटेंट नियम के तहत, आप अपने आविष्कार को सुरक्षित कर, 20 वर्षों तक पारितोषिक पा सकते हैं, वहीं कॉपीराइट नियम के तहत, आप अपनी रचनाओं पर, जीवनप्रयन्त तथा तत्पश्चात आपके वंशज 50 वर्षों तक लाभ कमा सकते हैं। यदि आपने कोई, उत्पाद विकसित किया है, तो ट्रेडमार्क नियम के तहत, आप अपने उत्पाद का बाजारीकरण, अपने ही किसी इच्छित ट्रेडमार्क से कर सकते है, जो नियमित नवीनीकरण करने पर, अनिश्चित काल तक वैध रहता है। बौद्धिक सम्पदाओं के संरक्षण से किसी व्यक्ति विशेष का ही नहीं, अपतु, सम्पूर्ण देश का आर्थिक एवं सामाजिक विकास होता है।

आज के इस वैश्रिकरण के दौड़ में, जो देश और जिस देश का नागरिक, अपने बौद्धिक सम्पदा के प्रबंन्धन एवं सुरक्षा के प्रति जागरूक नहीं हैं, वह देश एवं उस देश का नागरिक कभी विकसित नहीं हो सकता। यह अध्याय, बौद्धिक सम्पदा अधिकार को आम लोगों तक पहुँचाने का, एक तुच्छ प्रयास मात्र है।

टिप्पणी